छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
हिन्दी मासिक मुख पत्र
माह : भाद्रपद-आश्विन पक्ष, संवत् 2082
माह - सितम्बर 2025 (संयुक्तांक)

ओ३म्

अंक 224, मूल्य 10

अग्निदूत

अग्निं दूतं वृणीमहे. (ऋग्वेद)

आर्य समाज 150 मानव सेवा के स्वर्णिम वर्ष 1875-2025

विश्व के इतिहास में अब तक का सबसे विशाल
आर्यसमाज सार्द्ध शताब्दी अंतर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन
30 अक्टूबर से 2 नवम्बर 2025
सम्मेलन स्थल - स्वर्ण जयन्ती पार्क, रोहिणी, सैक्टर-10, दिल्ली-85

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

दण्डी गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती

रायगढ़ में सम्पन्न छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का त्रैवार्षिक निर्वाचन की झलकियाँ

छत्तीसगढ़ के विभिन्न क्षेत्रों में सम्पन्न श्रावणी पर्व पर वेद प्रचार कार्यक्रम

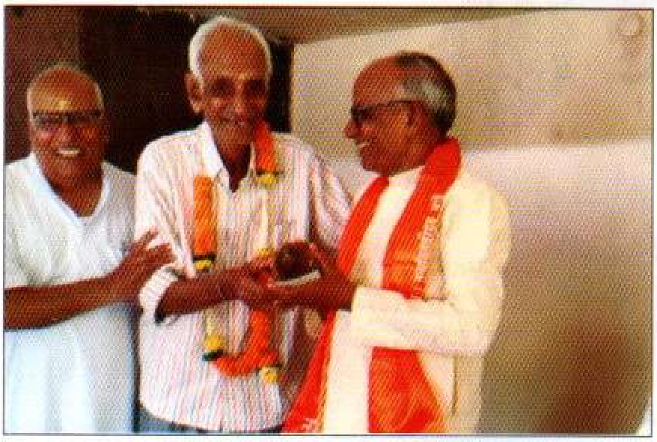

अग्निदूत

हिन्दी मासिक

राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक राजनीतिक विचारों की मासिक पत्रिका

विक्रमी संवत् – 2082
सृष्टि संवत्–1,96,08,53,126
दयानन्दाब्द – 201

वर्ष – 20, अंक – 03 | ओ३म् | मास/सन् – सितम्बर 2025

श्रुतिप्रणीत-सिद्धधर्मवह्निरुपत्त्वकं
महर्षिचित्त-दीप्त वेद-सारभूतनिश्चयम्।
तदग्निसंज्ञकस्य दौत्यमेत्य सझसझकम्.
सभाग्निदूत-पत्रिकेयमादधातु मानसे॥

प्रधान सम्पादक
श्री जोगीराम आर्य
प्रधान सभा
(मोबा. 9977152119)

प्रबंध सम्पादक
श्री अवनीभूषण पुरंग
मंत्री सभा
(मोबा. 9893063960)

सहप्रबंध सम्पादक
श्री योगीराम साहू
कोषाध्यक्ष
(मोबा. 9229687850)

: सम्पादक :
आचार्य कर्मवीर
मो. ८१०३१६८४२४

पेज सज्जक : श्रीनारायण कौशिक

– कार्यालय पता –
छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द परिसर, आर्य नगर,
दुर्ग (छ.ग.) 491001
फोन : (0788) 4225499
e-mail : chhattisgarhsabha@gmai.com

वार्षिक शुल्क : 100/-, दस वर्षीय 1000/-

-: विषय सूची :-

			पृष्ठ क्र.
1.	सांप मत बन	स्व. रामनाथ वेदालंकार	04
2.	शिक्षक, शिक्षार्थी और शिक्षणालय आखिर क्या हो भूमिका इनकी	आचार्य कर्मवारी	
3.	"वेदों में वर्णित सभी मनुष्यों के लिए नित्य करणीय पांच कर्त्तव्य"	मनमोहन कुमार आर्य	08
4.	आर्यसमाज द्वारा किये गये 150 ऐतिहासिक कार्य	आचार्य राहुलदेव	11
5.	परमात्मा के दर्शन	डॉ. ज्ञानप्रकाश	14
6.	अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन वर्तमान युग की आवश्यकता	ओमप्रकाश आर्य	16
7.	व्यक्ति के विकास की यात्रा	रितेश प्रधान	18
8.	श्राद्ध एवं तर्पण–वैदिक विवेचना	लक्ष्मी स्वर्णकार	20
9.	महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज की हिन्दी भाषा को देन	कृष्णदेव शास्त्री	22
10.	विश्वकर्मा और वेद	आचार्य विष्णमित्र वेदार्थी	25
11.	डॉ. राधाकृष्णन् और शिक्षक दिवस	मनुदेव अभय विद्यावाचस्पति	
12.	महर्षि दयानन्द के स्वर्णिम 200 विचार	आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री	
13.	मधुमेह से कैसे बचें ?	आचार्य डॉ. वेदव्रत अ	
14.	समाचार प्रवाह		

सूचना : छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि स
(ई–मेल) E-mail : chhattisgarhsab
(सम्पादक) E-mail : shastrikv04

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए स

कृष्ण ने और
र्षि वाल्मीकि ने
रचना की, युधिष्ठिर
श्चन्द्र जैसे सत्यवादी,
चिन्तक, विक्रमादित्य जैसे
ना मालवीय जैसे निष्ठावान्,
जी जैसे और गुरु गोविन्द जैसे
सी पतिव्रता नारियां हुई, नानक,

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : श्री जोगीराम भोय द्वारा वैदिक मुद्रणालय, छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा,
491001 से मुद्रित एवं "अग्निदूत" कार्यालय–छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, दुर्
सम्पादक - आचार्य कर्मवीर शास्त्री मोबा. नं. 8103168424, RNI No. CHH-HIN/2006/1740

वेद
वेदामृत

सांप मत बन

भाष्यकार – स्व. डॉ. रामनाथवेदालंकार

वेद
वेदामृत

माहिर्भूमा पृदाकुर्नमस्त आतानानर्वा प्रेहि।
घृतस्य कुल्या उप ऋतस्य पथ्या अनु ॥ (यजु. 6.12)

ऋषि : **मेघातिथिः** । देवता **विद्वांसः** । छन्दः **पूर्वार्द्धः–भुरिक्प्राजापत्या अनुष्टुप्ः उत्तरार्द्ध–साम्नी उष्णिक्** ।

(आतान) हे (यश, सद्‌गण आदि का) विस्तार करने वाले विद्वन् ! (तू) **(अहिः)** सांप **(मा भूः)** मत बन, **(मा पृदाकुः)** न अजगर। **(ते नमः)** तुझे नमस्कार प्राप्त हो, (तू) अहिंसक और अपराश्रित (होकर) **(प्रेहि)** आगे बढ़। **(घृतस्य)** घी और तेज की **(कुल्याः)** नहरों के **(उप)** समीप (पहुंच)। **(ऋतस्य)** सत्य की **(पथ्याः)** पथ नीतियों का **(अनु)** अनुसरण कर।

हे विद्वन् ! तू आतान है, विस्तार करने वाला है। तुझे संसार में अपने यश का विस्तार करना है, सद्‌गुणों का विस्तार करना है, धन, धर्म, यज्ञ, न्याय, सुख, आरोग्य, ज्ञान, श्रेष्ठनीति आदि का विस्तार करना है, उत्कृष्ट चक्रवर्ती राज्य का विस्तार करना है। उसके बाद तू सत्य मार्ग का ही अनुसरण कर। कभी–कभी तुझे ऐसा प्रतीत होगा कि असत्य का अवलम्बनकर तू जल्दी विस्तार के लक्ष्य को पा सकता है, क्योंकि असत्य–पथ–गामियों ने भी संसार में बड़े–बड़े राज्य वैभव आदि के विस्तार किये हैं। पर उस प्रलोभन में तू मत पड़। असत्य की कमाई कभी फलदायक नहीं होती। असत्य से विस्तार पाये हुए अनेक लोगों ने मृत्यु के समय पश्चाताप के आंसू बहाये हैं। अतः तू असत्य का आश्रय न लेकर सत्य मार्ग की जो नीतियाँ वेदादि शास्त्रों ने वर्णित की है, उन्हीं पर चल। सावधान रह, तू 'सांप' मत बन, सर्प की तरह टेढ़ी–मेढ़ी चाल मत चल, कुटिल आचरण मत कर, अपने अन्दर विष मत रख। 'अजगर' मत बन, अजगर जैसे मुंह फाड़कर ...पने शिकार को निगल जाता है, वैसे तू अपनी चादर लम्बी लम्बी करके पराई सम्पत्ति को मत हथिया, दूसरे ...यों को मत हड़प, परकीय सुराज्य पर दान्त मत गड़ा, सब कुछ अपने पास समेट लेने की परिग्रह वृत्ति ... तू संसार में आगे बढ़ 'अनर्वा' होकर आगे बढ़। अपने आपको आगे बढ़ाने के लिए दूसरों की ... मत कर। अहिंसा–व्रती बनकर उत्कर्ष की सीढ़ी पर चढ़। आत्म विश्वास का सम्बल लेकर, ...' की नहरों के समीप पहुंच। वैदिक घृत शब्द घी और तेज दोनों का वाची है। घी की नहरें ...ऐश्वर्यशालिता का प्रतीक है। तू विपुल भौतिक समृद्धि को प्राप्त कर। तेज की नहरें ...तीक है। तू आध्यात्मिक ऐश्वर्य की नहरों में भी स्नान कर। यदि इन सब प्रेरणाओं ...र अपने जीवन को चलायेगा, तो तुझे चारों ओर से 'नमः' प्राप्त होंगे, सब तुझे ... और आदर प्रदर्शित करेंगे, चारों दिशाएं तेरे आगे झुक जायेंगी।

...र्मणि। 3. शुम्भ भासने।

सम्पादकीय

शिक्षक, शिक्षार्थी और शिक्षणालय आखिर क्या हो भूमिका इनकी

सहृदय पाठकों!

5 सितम्बर भारत के द्वितीय राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्लीराधाकृष्णन के जन्म दिन के उपलक्ष्य में पूरी तरह से शिक्षकों के नाम समर्पित है, आइये विश्लेषण करते हैं कि किस तरह से शिक्षक एक इकाई के रुप में समग्र राष्ट्रोत्थान में अपने अमूल्य योगदानों को जोड़कर देश की खुशहाली में हिस्सा बन सकता है। भारत हमारा राष्ट्र है। हम इसकी गौरवशाली सन्तान हैं। हमारा चरित्र एवं आचरण, इसके गौरव तथा मर्यादा के अनुसार हो तथा हमारी शिक्षा–दीक्षा और कार्य–कलाप, इसके सम्मान को बढ़ाने वाले हों। यह है वह प्रेरणा और महत्वाकांक्षा जिसे मूर्त रुप देने के लिए स्वदेश-प्रेम, स्वाभिमान, सहिष्णुता, स्वानुशासन, सद्व्यवहार, संगठन और स्वाध्याय आदि गुणों को शिक्षकों द्वारा अपने शिक्षार्थियों में उत्पन्न करने का प्रयास करना नितान्त आवश्यक है। शिक्षण संस्थान के शिक्षकगण शिक्षार्थियों के मन में भारत की महानता, भव्यता तथा पावनता के सम्बन्ध में, गौरव के भाव भरें, क्योंकि कर्मठ और आदर्शवादी आचार्यों के सदाचरण का विद्यार्थियों पर विशेष प्रभाव होता है। शिक्षकों के आदर्श नेतृत्व में ही, आज के शिक्षार्थी कल के आदर्श राष्ट्र निर्माता बन सकने में समर्थ हैं।

हम उस देश में उत्पन्न हुए हैं जिस देश में योगीराज श्रीकृष्ण ने और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जैसे महापुरुषों में जन्म लिया, महर्षि वाल्मीकि ने रामायण की रचना की, महर्षि वेदव्यास ने महाभारत की रचना की, युधिष्ठिर जैसे धर्मात्मा, ऋषि दधीचि जैसे दानी, महाराजा हरिश्चन्द्र जैसे सत्यवादी, महर्षि दयानन्द जैसे मनीषी आचार्य चाणक्य जैसे चिन्तक, विक्रमादित्य जैसे शासक, लोकमान्य तिलक जैसे कर्मयोगी, महामना मालवीय जैसे निष्ठावान्, महाराणा प्रताप जैसे प्रजावीर, छत्रपति शिवाजी जैसे और गुरु गोविन्द जैसे कर्मवीर हुए। सीता, सावित्री अनसूया जैसी पतिव्रता नारियां हुई, नानक, कबीर, तुलसी और सूरदास जैसे भक्त हुए।

हमारा देश गौरवशाली है, वैभवशाली है । गंगा और गायत्री का देश हैं । ऋषि मुनियों की घोर तपस्या, सन्तों की वाणी और यहां की सभ्यता और संस्कृति, हम सब की अमूल्य निधि है । शिक्षक बन्धुओं का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वे अपने छात्र–बालकों के हृदयों में, शिक्षा के माध्यम से, भारत का भव्य और पावन चित्र अंकित करें, जिसके परिणाम स्वरुप छात्र–बालक कोई ऐसा काम न करें, जो हमारे देश की संस्कृति, प्रतिष्ठा और मर्यादा के अनुकूल न हो । शास्त्र कहते हैं – **'क्रतुमयोऽयं पुरुषः, स यत्क्रतुर्भवति तत्कर्म कुरुते, यत्कर्म कुरुते तदभिसम्पद्यते'** अर्थात् पुरुष क्रतुमय है, वह जैसे संकल्प करता है वैसे ही आचरण करता है और जैसा आचरण करता है फिर वैसा ही बन जाता है । कर्म का आधार आचार–विचार ही है । अतः स्पष्ट है कि अच्छे आचरण और सच्चारित्र्य के लिये अच्छे विचारों को मन में लाना आवश्यक है । अच्छे शास्त्रों का अभ्यास, श्रेष्ठ पुरुषों का संग करने और पवित्र वातावरण में रहने से अच्छे और शुभ विचार बनते हैं, बुरे कर्म और बुरे विचार छूट जाते हैं । अतः श्रेयस्कामी सर्वदा–सर्वत्र सच्चिन्तन में ही लगे लहते हैं और बालकों को भी आदर्श राष्ट्र निर्माण के लिये सच्चिन्तन में लगाना है ।

वर्तमान युग में समस्त विश्व–चारित्र्य दौर्बल्य–व्याधि से पीड़ित है । भारत वर्ष भी, इस रोग के जबड़े केअभ्यान्तर में उत्तरोत्तर ग्रस्त होता जा रहा है । आए दिन समाचार पत्रों के पन्नों में घटित वीभत्स दुर्घटनाओं के समाचारों से ओत–प्रोत रहते हैं, आज के भारतीय जीवन में विचारों और भावों की उच्चता की चर्चा मात्र होती है। हम उच्च कोटि के गणराज्य का चिन्तन करते हैं, किन्तु चारित्रिक धरातल के निम्न रहने के कारण यह सब मात्र कल्पना की उड़ान बन कर रह जाता है । इसलिए अच्छे राष्ट्र के निर्माण के लिये यह आवश्यक है कि छात्र–बालकों का चरित्र उज्ज्वल हो । उनके जीवन में देवी सम्पत्ति के लक्षणों को उद्भव और विकास हो । अतः स्थितपज्ञ, गुणातीत आदर्श महापुरुषों के लक्षण पढ़ें । हमारे शास्त्रों में महापुरुषों के जो लक्षण बताए हैं उन्हें अपना आदर्श बनाकर अपने और अपने छात्र–बालकों के चरित्र को परिष्कृत करना चाहिये, ताकि हमारे राष्ट्र का भविष्य सर्वतोमुखी प्रतिभा से आलोकित हो उठे ।

शास्त्रों में शिक्षक और शिक्षार्थियों के विचारों को संभालना के लिये विशेष ध्यान दिया गया है । छात्र–बालकों के कोमल और निर्मल अन्तःकरणों में, पहले से ही जो संस्कार अंकित हो जाते हैं, वे ही उनका चरित्र निर्माण करते हैं । इसलिए छात्रों को पहिले से ही श्रेष्ठ पुरुषों के संग में तथा सत्शास्त्रों के अभ्यास में लगाना लाभदायक है । जैसे लोगों का संग होता है जैसे लोगों से व्यवहार होता और जैसा होने की उत्कट इच्छा होती है मानव वैसा ही हो जाता है । सद्‌विचारों के प्रसार से शिक्षणालय श्रेष्ठ चरित्र वाले छात्रों का निर्माण कर सकते हैं। विद्यार्थियों के उज्ज्वल चरित्र से विश्व का अभ्युदय होगा । वृक्ष–वृक्ष से जंगल बनता है । यदि एक वृक्ष विकसित, पल्लवित, पुष्पित और फलित होताहै तो वह वनश्री की वृद्धि ही करता है । इसी प्रकार समाज का एक–एक छात्र–बालक चरित्रवान् होकर, पूरे समाज को चरित्रवान् बनाने में योग दे सकता है । यदि उनसे प्रेरणा प्राप्त करके दूसरों ने भी अनुसरण करना प्रारम्भ किया तो वह पूरे समाज की काया पलट कर सकता है । लौकिक अभ्युदय और पारमार्थिक कल्याण के लिये, धार्मिक भावनाओं से ओत–प्रोत सदाचार की प्राथमिक आवश्यकता है, चरित्र निर्माण का यही प्रथम सोपान है ।

व्यक्तियों से समाज तथा समाज से राष्ट्र का निर्माण होता है । उन्नतिशील समाज तथा राष्ट्र के लिये व्यक्तियों का चरित्रशील होना आवश्यक है । शास्त्रानुकूल कर्म या व्यवहार ही चरित्र है । प्राचीन भारत में व्यक्ति का सम्मान था, धन–वैभव का नहीं, इसलिये भारत वर्ष में श्रीराम और सीता का सदाचार त्रिकालबाधित सत्य की भांति

मान्य है, स्वर्णमयी लंका के स्वामी रावण का नहीं। अतएव राष्ट्र को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने के लिये शिक्षणालयों के शिक्षकों को प्राचीन शिक्षा पद्धति का अनुसरण करते हुए अपने विद्यार्थियों को आदर्श, शुचिशील और चरित्रवान् बनाने का भरसक प्रयत्न करना है, ताकि आज के शिक्षार्थी महापुरुष बन कर राष्ट्र का गौरव, सम्मान, संस्कृति और देश-धर्म-मर्यादा की रक्षा करते हुए आदर्श आध्यात्मिक राष्ट्र-निर्माण में सफलता प्राप्त कर सकें।

"स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः" हमारा राष्ट्र समग्र विश्व के लिये राष्ट्रीय चरित्र का सजग प्रहरी के रुप में था। आज असहिष्णुता, क्षेत्रीयता, अखण्ड राष्ट्रीयता की भावना का अभाव, तुच्छ भाषागत विवाद आदि दुर्गुण हमारे अतीत के सभी उज्ज्वल चरित्र को धूमिल और विस्मृत कर चुके हैं। दुःस्थिति आकण्ठ निमग्न हो चुकी है। देश, राष्ट्र, समाज और व्यक्ति प्रतिक्षण अधोगामी होते जा रहे हैं। नदी की धारा और मानव की प्रवृत्ति अधोगामिनी होती है। उन्हें निम्नगा होने से रोकना और ऊर्ध्वगामिनी बनाना अत्यन्त ही कठोर कार्य है, जो निष्ठा, तत्परता तथा दृढ़ संकल्प के बिना सम्भव नहीं है।

अतः आवश्यक है कि राष्ट्रीय चरित्र-निर्माण हेतु मानवीय प्रवृत्ति को ऊर्ध्वगामिनी बनाया जाये और निष्ठा, लगन तथा तत्परता से एतदर्थ राष्ट्र-व्यापिनी योजना चला कर, सैद्धान्तिक तथ्यों को शिक्षार्थियों के हृदयों में, शिक्षा के माध्यम द्वारा, अंकित करने का भगीरथ प्रयत्न किया जाय। इसी में राष्ट्रीय चरित्र की शाश्वत उपयोगिता निर्विवाद है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में, प्रगति का कार्य तभी सम्भव है, जब व्यक्ति समाज और राष्ट्र, परिस्थितियों की चुनौतियों को स्वीकार कर, संघर्ष करने के लिये तत्पर हों। यह भी एक तप है। उपनिषदों में कहा गया है कि ब्रह्म भी अपना विस्तार तप से ही करने में समर्थ होता है। यदि हम मानवीय हृदय की संकीर्णता को छोड़ कर तप की शक्ति पहचान लें, तो व्यक्ति, समाज और राष्ट्र इन सब के चरित्र को नया आयाम प्राप्त हो सकता है, ऐसा आयाम, जिसमें व्यक्ति, समाज और अणुविराट् के स्पर्श से आभूषित हो सके, धार्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों में संबंधित व्यक्तियों और शिक्षकों को शिक्षार्थियों में तप इस शक्ति को सैद्धान्तिक रुप से समझाना है और क्रियात्मक रुप में परिणत करने के लिये प्रयास करना है और चरित्र निर्माण के उस जीवन-दर्शन को जो सत्य को सर्वोपरि मान कर चलता है, शिक्षार्थियों को हृदयङ्गम कराना है। आध्यात्मिक जीवन-दृष्टि ही बालक-छात्रों के स्वच्छ मन को दिव्य आलोक से अलंकृत करने में सक्षम है।

राष्ट्र को प्रगति-पथ पर अग्रसर करने के लिये शिक्षार्थियों में सदाचार, चरित्र और शील की भावनाएं आवश्यक ही नहीं प्रत्युत अनिवार्य भी है। प्रत्येक शिक्षणालय, शिक्षक और शिक्षार्थी का अपने देश के प्रति महान् उत्तरदायित्व होता है। हमारा राष्ट्र भारत वर्ष धर्म और अध्यात्म-विद्या का स्रोत है। हमारी इस पवित्र मातृभूमि का मेरूदण्ड, मूलभिति या जीवन-केन्द्र एक मात्र धर्म ही है। इसलिये हमें इस धर्मप्राण राष्ट्र में धर्म की नीति के अनुसार चलना है। हमारा नैतिक आचरण उच्च व महान् हो। हमें अपने प्राचीन गौरव को सम्मुख रखकर, हिंसा,-प्रतिहिंसा, द्वेष, अत्याचार और भ्रष्टाचार प्रभृत्ति अनैतिक आचारों से बचना है। अपने राष्ट्रीय चरित्र उत्कर्ष के लिये इच्छुक, लालायित और प्रयत्नशील होना है। यदि हमारे आचार्य और शिक्षक अपने शिक्षार्थियों को इस निर्दिष्ट पद्धति पर चलाने का प्रयास करें और उन्हें उनके राष्ट्रीय उत्तरदायित्व को हृदयङ्गम करा सकें, तभी अपूर्व महिमा से मंडित भावी राष्ट्र का पुनजार्गरण होगा। तभी पूर्व गौरव हस्तगत हो पायेगा।

कहेगा जगत् फिर एक स्वर से सारा, वही श्रेष्ठ भारत गुरु है हमारा ॥

- आचार्य कर्मवीर

विचारणीय "वेदों में वर्णित सभी मनुष्यों के लिए नित्य करणीय पांच कर्त्तव्य"

– मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्य संसार में आता है। उसकी माता उसकी प्रथम शिक्षक होती है। वह माता जी अच्छा व उचित समझती है वह ज्ञान अपनी सन्तानों को देती है। प्राचीनकाल में हमारी सभी माताएँ व समाज की स्त्रियां वैदिक शिक्षाओं में निपुण होती थी। उन्हें सत्य व असत्य ज्ञान का विवेक हुआ करता था। वह ईश्वर, आत्मा, संसार तथा मनुष्य के कर्त्तव्यों एवं अकर्त्तव्यों से भली प्रकार से परिचित हुआ करती थी। महाभारत युद्ध के बाद ऋषि परम्परा समाप्त होकर देश देशान्तर में अविद्या का अन्धकार फैला। न केवल स्त्रियां अपितु हमारे ज्ञानी पंडित आदि भी वेद की सत्य शिक्षाओं व ज्ञान से वंचित हो गये। ऐसे समय में देश में अज्ञान व अन्धविश्वास उत्पन्न हुए जिसका प्रभाव पूरे विश्व पर पड़ा। महाभारत के बाद वेदों के अध्ययन व अध्यापन की प्राचीन परम्परा बन्द होने से देश देशान्तर के मनुष्य ईश्वरीय ज्ञान वेदों में बताये गये मनुष्यों के प्रमुख पांच कर्त्तव्यों को भी भूल गये। इस कारण ज्ञान की दृष्टि से संसार का पतन हुआ और पूरा विश्व वेद ज्ञान की अनुपस्थिति में अविद्या, अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड व कुरीतियों में फंस गया। ईश्वर व आत्मा के सच्चे स्वरुप का ज्ञान भी भूला दिया गया था। ईश्वर, देश व समाज के प्रति कर्त्तव्यों सहित मनुष्य को अपने प्रति किये जाने वाले कर्त्तव्यों यथा ज्ञान प्राप्ति, वेदाचरण पंचमहायज्ञ आदि का भी ज्ञान नहीं रहा था।

स्वामी दयानन्द सरस्वती (1825-1883) को अपने बाल्यकाल में अपनी आयु के चौदहवें वर्ष में मूर्तिपूजा करते हुए कुछ शंकाये उपस्थित हुई थी। ईश्वर की मूर्ति बनाकर पूजा करने की प्रचलित पद्धति के प्रति तर्क व युक्तियों से संबंधित कारणों का ज्ञान व समाधान उन्हें अपने किसी परिवारजन व विद्वानों से भी नहीं मिला था। कालान्तर में मृत्यु के भय ने भी उनके मन में स्थान पा लिया था। इन प्रश्नों का जब उन्हें किसी से सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला तो उन्होंने अपने पितृगृह का त्याग कर इन प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए खोज की। वह देश भर के विद्वानों, योगियों व साधु-संन्यासियों से मिले। उन्होंने प्रायः सभी विद्वानों से अपनी शंकाओं के समाधान पूछे थे। इसी बीच वह उच्च कोटि के योगियों के सम्पर्क में आकर योग के सभी अंगों को भी यौगिक साधना से सिद्ध करने में सफल हुए। योग का अंतिम अंग समाधि होता है जिसमें सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सब जगत के आधार ईश्वर का साक्षात्कार होता है। ऋषि दयानन्द ने समाधि अवस्था को प्राप्त कर अपनी आत्मा में ईश्वर का साक्षात्कार वा प्रत्यक्ष भी कर लिया था। विद्या की तीव्र इच्छा के कारण वह प्रयत्न करते हुए वेद वेदांगों के विद्वान् प्रज्ञाचक्षु गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी के सम्पर्क में आये। स्वामी दयानन्द ने स्वामी विरजानन्द जी से सन् 1860 से 1863 तक लगभग तीन वर्षों में वेद-वेदांगों का अध्ययन किया। इससे उन्हें आध्यात्मिक तथा भौतिक पदार्थ विद्याओं का सूक्ष्मज्ञान हुआ था जिससे उनकी आत्मा की तृप्ति हुई थी।

स्वामी दयानन्द ने वेदों को प्राप्त कर उनकी परीक्षा की और अपनी सत्यान्वेषण बुद्धि से पाया कि चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा द्वारा चार आदि ऋषि अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा को दिया गया अपौरुषेय सत्य ज्ञान है। उन्होंने अपने कर्त्तव्य पर भी विचार किया था। वेद सभी मनुष्यों को वेदाध्ययन की प्रेरणा सहित दूसरे मनुष्यों में वेद प्रचार की प्रेरणा भी

करते हैं। ऐसा करने से ही संसार से अज्ञान व अविद्या दूर हो सकती है। संसार में अविद्या की अन्धकार से तथा विद्या की प्रकाश से उपमा दी जाती है जो कि वस्तुतः सत्य ही है। अज्ञानी मनुष्य का जीवन निष्फल होता है। ज्ञान से बढ़कर संसार में कोई पदार्थ, धन व सम्पत्ति नहीं है। जो काम ज्ञान से होता है वह धन सम्पत्ति से नहीं हो सकता। शास्त्रों की सत्य मान्यता है कि जो सुख व आनन्द एक धार्मिक वेदज्ञानी व सत्य का ज्ञान रखने वाले मनुष्यों को प्राप्त होता है वह अन्य अल्पज्ञानी व अज्ञानी मनुष्यों को प्राप्त नहीं होता।

ऋषि दयानन्द ने अपने गुरु दण्डी स्वामी विरजानन्द तथा अपनी अन्तः प्रेरणा से संसार से अविद्या दूर करने तथा विद्या का प्रसार करने के लिए वेद प्रचार के कार्य को चुना था। उन्होंने अपनी मृत्यु पर्यन्त इस कार्य को पूर्ण समर्पण भाव से सम्पन्न किया था। उनके वेद प्रचार कार्यों के परिणाम से ही देश में अविद्या दूर हुई व कम हुई है। देश विद्या के क्षेत्र में ऊपर उठा है। वेद ज्ञान के कारण वर्तमान समय में हमारा देश आध्यात्मिक दृष्टि से विश्व गुरु के प्राचीन उच्च आसन पर प्रतिष्ठित हुआ है। ऋषि दयानन्द ने ही वेदी सहित वैदिक धर्म एवं संस्कृति का पुनरुद्धार किया है। ऋषि दयानन्द के प्रयासों से ही वैदिक धर्म की रक्षा हो सकी है। आज धर्म व संस्कृति पर संकट के जो बादल मंडरा रहे हैं उनका समाधान भी विश्व में वेद ज्ञान के प्रचार प्रसार से ही हो सकता है व होगा।

वेद एवं वेद के ऋषियों द्वारा प्रणीत शास्त्रों व ग्रन्थों का अध्यन करने पर ज्ञात होता है कि संसार के सब मनुष्यों के पांच प्रमुख कर्त्तव्य है जिनका आचरण उन्हें प्रतिदिन करना चाहिए। प्रथम कर्त्तव्य को ईश्वरोपासना, ब्रह्मयज्ञ वा सन्ध्या के नाम से जाना जाता है। इसके अन्तर्गत वेदाध्ययन से ईश्वर का ज्ञान प्राप्त कर इस सृष्टि के रचयिता व पालक परमेश्वर की उसके सत्य गुणों, कर्मों व स्वभाव का स्मरण करते हुए उसका ध्यान करते हैं। यही ईश्वर की उपासना कहलाती है। परमात्मा ने जीवात्माओं वा मनुष्य आदि प्राणियों के लिये ही इस सृष्टि को बनाया है। उसी ने हमें मानव शरीर दिया है तथा हमारी आवश्यकता के सभी पदार्थ भी उसी ने बनाये हैं। ईश्वर यदि सृष्टि को न बनाता और हमें जन्म न देता तो हम सुखों का भोग नहीं कर सकते थे। हमें जो सुख प्राप्त हैं उसका कारण व आधार परमात्मा ही है, अन्य कोई नहीं। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके सत्यास्वरुप का ध्यान करते हुए उसके प्रति कृतज्ञता एवं उसका धन्यवाद करें। मनुष्य का दूसरा प्रमुख कर्त्तव्य मुख्यतः अपने पर्यावरण को शुद्ध रखना व शुद्ध करना होता है। हमारे कारण ही वायु, जल तथा पृथ्वी आदि प्रदुषित व विकृतियों को प्राप्त होती है। इनको शुद्ध रखने के लिए ऋषियों ने वेदों में वर्णित देवयज्ञ, अग्निहोत्र को जाना और उसको सभी गृहस्थी मनुष्यों के लिए व्यवहृत किया। देवयज्ञ अग्निहोत्र ज्ञान व विज्ञान से युक्त वह कार्य व अनुष्ठान होता है जिससे वायु व जल आदि सहित पर्यावरण की शुद्धि होती है। इससे मनुष्य स्वस्थ व निरोग रहता है। उसके ज्ञान विज्ञान की उन्नति होती है। सन्ध्या व देवयज्ञ को प्रातः व सायं किया जाता है। ऋषि दयानन्द ने इन दोनों यज्ञों को करने की विधियां भी लिखकर हमें प्रदान की है। इन विधियों से हमें लाभ उठाना चाहिए।

तीन इतर मुख्य कर्त्तव्य पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ तथा बलिवैश्वदेवयज्ञ होते हैं। पितृयज्ञ में माता-पिता तथा परिवार के वृद्ध जनों की सेवा करनी होती है। हम जब वृद्धहोंगे तो हमें भी सेवा की आवश्यकता होगी। इसलिये यह सुन्दर परम्परा डाली गई है। अतिथि यज्ञ में वेदों के विद्वान व सच्चे धार्मिक मनुष्यों की जो जनकल्याण की भावना से युक्त होकर हमारे घरों में यदाकदा आते हैं उनका श्रद्धापूर्वक सेवा व सत्कार किया जाता है। बलिवैश्वदेव यज्ञ में परमात्मा के बनाये पशु व पक्षियों आदि के आश्रय व पालन में सहायता की जाती है। यद्यपि सभी पशु आदि प्राणियों का पालन परमात्मा के द्वारा होता है परन्तु हमें भी इन असहाय प्राणियों की रक्षा व पालन में सहयोग करना होता है। इन पांच प्रमुख कर्त्तव्यों को पंचमहायज्ञ के नाम से जाना जाता है। हम सबो इन पांच कर्त्तव्यों व यज्ञों का अनुष्ठान करना चाहिए। इन पांच यज्ञों को करने के लिये पंचमहायज्ञ विधि संस्कार विधि तथा सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए। इन पांच यज्ञों को प्रतिदिन करना सब मनुष्यों का धर्म व कर्त्तव्य है। इससे हमारा जन्म लेना सार्थक व सफल होता है। हमारी आध्यात्मिकता तथा सांसारिक उन्नति होती है तथा जन्म जन्मान्तरों में हमें सुख प्राप्त होता है। जो मनुष्य इन यज्ञों को नहीं करते वह इनसे होने वाले लाभों से वंचित रह जाते हैं। इसके साथ ही इन यज्ञों को करने से ईश्वर की व्यवस्था से हमें जो सुख तथा सुख की सामग्री प्राप्त होती है उससे भी इन यज्ञों को न करने वाले लोग वंचित होते हैं। इसलिए पंचमहायज्ञों को सभी मनुष्यों को अवश्य ही करना चाहिए।

पता : 196, चुक्खूवाला-2, देहरादून 248001

हालात को ऐसे न होने दें कि आप हिम्मत हार जायें, बल्कि हिम्मत ऐसी रखें कि हालात ही हार जाये।

"हिन्दी"

14 सितम्बर हिन्दी दिवस

हम हिंदी के उपासक है,
हिंदी देवी की मूरत है।
हिंदी भारत की सूरत है॥

हिंदी में संस्कृति की धारा।
हिंदी मृदुल, जन-जन का नारा॥

हम हिंदी के उपासक है,
इसमें विविध लोकभाषाओं की छवि।
नित सृजन करते लाखों लेखक-कवि॥

हिंदी भारत का जीवन।
हिंदी भारत का तन-मन॥

हम हिंदी के उपासक हैं,
हिंदी घर-घर की भाषा।
हिंदी स्वर्णिम कल की आशा॥

लिखें, पढ़े और बोले हिंदी।
तो हर हाल में समृद्ध हो हिंदी॥

हम हिंदी के उपासक हैं,
हिंदी साधना, नैतिक दायित्व हमारा।
हिंदी के प्रति सच्चा हो प्यार हमारा॥

- मुकेश कुमार ऋषि वर्मा -
ग्राम-रिहावली, डाक घर तारौली गूजर,
फतेहाबाद आगरा (उ.प्र.) 283111

आर्यसमाज के 150वें स्थापना वर्ष पर

आर्यसमाज द्वारा किये गये 150 ऐतिहासिक कार्य

विवेचनात्मक

– आचार्य राहुलदेवः

आर्यसमाज स्थापना के 150 वर्ष पूर्ण होने पर आर्यसमाज के द्वारा किए गए 150 ऐतिहासिक कार्यों का उल्लेख किया है, जो निम्न है :

1. विधवा विवाह का प्रावधान किया और इसकी शुरुआत आर्यों ने अपने घर में विधवा बहुएं ला करके उदाहरण उपस्थित किया।
2. आर्यसमाज ने बहु विवाह को अवैदिक बताया और इसे स्त्री समाज के विरुद्ध सिद्ध किया।
3. आर्यसमाज ने बाल विवाह का प्रतिषेध किया परिणाम स्वरुप अंग्रेजों को परतन्त्र भारत में विवाह की आयु का कानून बनाना पड़ा।
4. आर्यसमाज ने परतन्त्र भारत में सर्वप्रथम कन्याओं के लिए विद्यालय खोले और विरोध होने पर अपनी बेटियों का प्रवेश करवाया।
5. आर्यसमाज स्त्री शिक्षा को अनिवार्य बताया, समाज और राष्ट्र की उन्नति के लिए स्त्री शिक्षा की पुरजोर वकालत की।
6. आर्यसमाज ने कन्याओं के लिए परतन्त्र भारत में गुरुकुल खुलवाए और विधर्मी होने से हिन्दू समाज की बेटियों को बचाया।
7. आर्यसमाज ने सती प्रथा को अमानवीय बताया और विधवाओं को जीने का अधिकार दिलवाया।
8. बाल विधवाओं के पुनरुद्धार के लिए आर्यसमाज ने सामाजिक लड़ाईयां लड़ी।
9. बाल विधवाओं की शिक्षा, समाज में उनकी प्रतिष्ठा और उनके पुनर्विवाह के लिए न्यायिक प्रयास किए।
10. स्त्रियों को पर्दा प्रथा से निकालकर, शिक्षा, राजनीति और सामाजिक कार्यों में उनकी भूमिका के लिए संघर्ष किया।
11. स्त्रियों को नर्क का द्वार बताने वाले को सैद्धान्तिक रुप से पराजित किया और उन्हें स्वर्ग प्रदात्त बताया।
12. आर्यसमाज ने स्त्रियों को पैर की जुति बताने वालों के मुंह पर तमाचा मारा और बताया कि स्त्रियां तो सिर की ताज होती हैं।
13. आर्यसमाज ने स्त्रियों को वेद पढ़ने का अधिकार दिलाया। उनके लिए गुरुकुल खोलकर वेद पढ़वाया और आज भी पढ़ा रहे हैं।
14. आर्यसमाज ने स्त्रियों को गायत्री मंत्र बोलने पढ़ने और जपने का अधिकार दिलाया।
15. आर्यसमाज ने स्त्रियों को कर्मकांड करवाने का अधिकार दिलाया और उन्हें वेदों की विदुषी बनाकर यज्ञ में ब्रह्मत्व के आसन पर प्रतिष्ठित किया।
16. आर्यसमाज ने संतानों के निर्माण के लिए माता निर्माता भवाति के उद्घोष के साथ माता को सबसे पहला शिक्षक बताया।
17. आर्यसमाज ने परतन्त्रता के बाद सर्वप्रथम स्त्रियों को व्यासपीठ पर बैठाया और उनको उपदेश देने का अधिकार दिलाया।
18. आर्यसमाज ने संसार को बताया कि स्त्रियां भी ऋषिकायें और संन्यासिनी हो सकती है।
19. आर्यसमाज ने "स्त्रियों में आधी आत्मा होती है या आत्मा नहीं होती है" इस बात का न केवल खण्डन किया अपितु समाज में पुरुषों के समानान्तर स्त्रियों की प्रतिष्ठा की।
20. स्त्रियों को दान देने, बेचने और ज़ड़वस्तु मानने वालों को आर्यसमाज ने करारा जवाब दिया।
21. आर्यसमाज ने दलित और पिछड़े वर्ग की बेटियों के लिए निःशुल्क शिक्षा व्यवस्था की।

उन्हें गुरुकुल में शिक्षित कर मुख्य धारा में जोड़ा ।

22. सदियों से चली आ रही मंदिरों की देवदासी प्रथा का आर्यसमाज ने विरोध किया। नारी को दासी नहीं नेत बताया ।

23. आर्यसमाज ने नारियों के स्वाभिमान को जगाया उसको चौके से निकालकर विभिन्न क्षेत्रों में उसको बढ़ाया ।

24. आर्यसमाज ने स्त्रियों को यज्ञोपवीत धारण करवाया।

25. आर्यसमाज ने स्त्रियों के वेद पढ़ने पर जिह्वा काटने और मन्त्र सुनने पर कान में सीसा पिघलाकर डालने जैसे अत्याचारों से मुक्त करवाया ।

26. आर्यसमाज ने परतन्त्र भारत में सर्वप्रथम शुद्रों के लिए विद्यालय खोले और सबके लिए समान पढ़ने की व्यवस्था की ।

27. आर्यसमाज ने शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार दिलाया ।

28. आर्यसमाज ने शुद्रों को कर्मणा ब्राह्मण बनाना शुरु किया ।

29. आर्यसमाज ने कहा कि शूद्र कुल में उत्पन्न होकर कोई भी मनुष्य ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र भी हो सकता है ।

30. आर्यसमाज ने कथित रुप से शूद्र कुल में उत्पन्न हुए बच्चों को गुरुकुल में पढ़ाना प्रारंभ किया।

31. आर्यसमाज ने कथित रुप से दलित शुद्र और नीचली जाति के कुल में उत्पन्न हुए बच्चों को वेद पढ़ाना प्रारंभ किया ।

32. आर्यसमाज ने निर्धन बच्चों के लिए गुरुकुल में निःशुल्क शिक्षा प्रारंभ की ।

33. आर्यसमाज ने छुआछूत को मिटाने के लिए बहुत संघर्ष किया ।

34. आर्यसमाज ने अस्पृश्यता के कलंक धोने के लिए अनेक सामाजिक लड़ाई लड़ी ।

35. आर्यसमाज ने शूद्रों के अतिरिक्त गैर ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए बच्चों को भी वेद पढ़ने के अभिशप्त से मुक्त करवाया ।

36. आर्यसमाज ने दबे कुचले लोगों को शिक्षा के साथ सम्मान दिलवाया ।

37. आर्यसमाज ने वेद के बंद कपाटों को संपूर्ण मानव जाति के लिए खोल दिया ।

38. आर्यसमाज ने दलित उत्थान के लिए उनका उत्पीड़न से बचने के लिए बहुत सी योजनाएँ चलाई ।

39. आर्यसमाज ने दलितों को मुख्य धारा में लाने के लिए उनको पढ़ाना-लिखाना शुरु किया ।

40. आर्यसमाज ने दलितों को ईसाईयों के कुचक्र से बचाया ।

41. आर्यसमाज ने दलितों एवं पिछढ़ों को मुस्लिम धर्मान्तरण से बचाया ।

42. आर्यसमाज ने दलितों के लिए समान शिक्षा और समान कर्मकांड करने की व्यवस्था की ।

43. आर्यसमाज ने दलितों को भारतीय समाज का अभिन्न अंग बताया ।

44. आर्यसमाज ने बताया कि मनु स्त्रियों और दलितों के विरोधी नहीं है ।

45. आर्यसमाज ने मनुस्मृति को वेदों के अनुकूल बताया ।

46. आर्यसमाज ने वर्ण व्यवस्था को कर्म पर आधारित बताया ।

47. आर्यसमाज ने जन्मना वर्ण व्यवस्था को वेद विरुद्ध बताया ।

48. आर्यसमाज ने कर्मणा व्यवस्था को अपने गुरुकुलों पर और आर्यसमाज पर लागू करके उसको वेद आधारित सिद्ध किया ।

49. आर्यसमाज ने जातिवाद का पुरजोर विरोध किया ।

50. आर्यसमाज ने विदेशों द्वारा दिए गए हिन्दू शब्द की जगह भारतीय मूल 'आर्य' शब्द की वकालत

की ।

51. आर्यसमाज ने जातिवाद को भारत के पतन का कारण माना और जातिवाद के मकड़जाल से भारतीय समाज को मुक्त करने के लिए अभी भी संघर्ष कर रहा है ।

52. आर्यसमाज ने भारतीयों को आर्ष शिक्षा और अनार्ष शिक्षा के भेद को बताया ।

53. आर्यसमाज ने सर्वप्रथम वेदों पर आधारित आर्ष शिक्षा के गुरुकुल चलाये ।

54. आर्यसमाज ने चारों वेदों को वैदिक संस्कृति का मूल माना और सिद्ध किया ।

55. आर्यसमाज ने वेदों को ईश्वर कृत मानता है, उसमें किसी भी प्रकार का इतिहास नहीं मानता।

56. आर्यसमाज ने वेदों को शंखासूर ले गया है इस भ्रांति का निवारण किया और वेद उपलब्ध कराया ।

57. आर्यसमाज महर्षि पाणिनि द्वारा व्याकृत वेदों के सच्चे अर्थों को मानता है ।

58. आर्यसमाज ने बताया कि वेद सृष्टि के आदि के हैं वेदों में सभी सत्य विद्यायें सूत्र रुप में विद्यमान हैं ।

59. आर्यसमाज ने बताया कि पुराण महर्षि व्यास कृत नहीं है और वे वेदों के अनुकूल भी नहीं है ।

60. आर्यसमाज वेद विरुद्ध ईश्वर के अवतारवाद को नहीं मानता है ।

61. आर्यसमाज मूर्ति में ईश्वर की पूजा का विधान नहीं मानता वह ईश्वर को सर्वव्यापक मानकर उसकी संध्या उपासना करने का विधान मानता है ।

62. आर्यसमाज ने कर्म फल पर आधारित पुनर्जन्म व्यवस्था को बताया ।

63. आर्यसमाज ने ईश्वर एक है और वह निराकार सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है इसका बहुत प्रचार किया ।

64. आर्यसमाज ने ईश्वर की प्राप्ति के लिए योग के आठ अंग को क्रियांत्मक रुप से लोगों को सिखाया ।

65. आर्यशमाज ने नास्तिकता की आंधी के बीच पुनर्जन्म और मोक्ष के सिद्धान्तों का व्यापक प्रचार किया ।

66. आर्यसमाज ने यह बताया कि जीवात्मा कभी ईश्वर में विलीन नहीं होता ।

67. आर्यसमाज ईश्वर और जीव के अलग-अलग अस्तित्व को बताया ।

68. आर्यसमाज ने बताया कि मुक्ति के पश्चात फिर जीवात्मा लौटता है, मध्यकाल में जीवात्मा को ब्रह्म में विलीन होता मान लिया जाता था ।

69. आर्यसमाज ने लाखों गृहस्थियों को पंच महायज्ञ सिखाया जो अब पीढ़ियों से इसका पालन कर रहे हैं ।

70. आर्यसमाज वेदों पर आधारित आश्रम व्यवस्था की सर्वोपयोगी व्याख्या संसार को बताई ।

71. आर्यसमाज ने शरीर की अवस्था के अनुसार ब्रह्मचर्य गृस्थ वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम को समाज के लिए उपयोगी माना है ।

72. आर्यसमाज ने यज्ञ को मनुष्य और प्रकृति के लिए सर्वोपयोगी माना और सिद्ध किया ।

73. आर्यसमाज यज्ञ में हिंसा स्वीकार नहीं करता आर्यसमाज ने यज्ञ में पशु हिंसा का घोर विरोध किया है ।

74. आर्यसमाज ने यज्ञ के वैदिक स्वरुप को संसार के सामने में उपस्थित किया, आज कराने के इच्छुक लोग आर्यसमाज में आते हैं ।

75. आर्यसमाज ने संसार के उपकार के लिए यज्ञ को विज्ञान के धरातल पर स्थापित किया और उसकी वैज्ञानिकता को सिद्ध किया ।

– क्रमशः शेष अगले अंक में

पता : आर्यसमाज बड़ाबाजार कोलकाता (प.बं.)

तात्विक

परमात्मा के दर्शन

– डॉ. ज्ञानप्रकाश, सेवानिवृत्त प्रोफेसर, कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

एक धर्मगुरु ने एक रात एक सपना देखा। सपने में उसने देखा कि वह स्वर्ग के द्वार पर पहुंच गया है। जीवन भर स्वर्ग की ही उसने बातें की थीं और जीवन भर स्वर्ग का रास्ता क्या है, वह लोगों को बताया था। वह निश्चित था कि जब मैं स्वर्ग के द्वार पर पहुंचुंगा तो स्वयं परमात्मा मेरे स्वागत को तैयार रहेंगे। लेकिन वहां द्वार पर तो कोई भी नहीं था। द्वार खाला भी नहीं था, बन्द था। और द्वार इतना बड़ा था कि उसके ओर–छोर को देख पाना सम्भव नहीं था उस विशाल द्वार के समक्ष खड़े होकर वह एक छोटी सी चीटीं की तरह मालूम होने लगा, इतना छोटा मालूम होने लगा। उसने बहुत द्वार को खटखटाया, लेकिन उस विशाल द्वार पर छोटे से आदमी की आवाजें भी पैदा हुई या नहीं, इसका भी पता लगाना कठिन था। वह बहुत डर गया। निरन्तर उसने यही कहा था कि परमात्मा ने अपनी ही शक्ल में आदमी को बनाया। और आज इस विराट द्वार के समक्ष खड़े होकर वह इतना छोटा मालूम होने लगा। बहुत चिल्लाने, बहुत द्वार पीटने पर कोई द्वार से एक छोटी खिड़की खुली और किसी ने झांका।

जिस व्यक्ति ने झांका था, उसकी हजार आंखें होंगी। और इतनी तेज रोशनी थी उन आंखों की कि वह धर्मगुरु एक छोटे से दीवाल के कोने में सरक गया। इतना डर गया और चिल्लाया कि आप कृपा कर चेहरा भीतर रखें। हे परमात्मन्! आप चेहरा भीतर रखे। मैं बहुत डर गया हूँ।

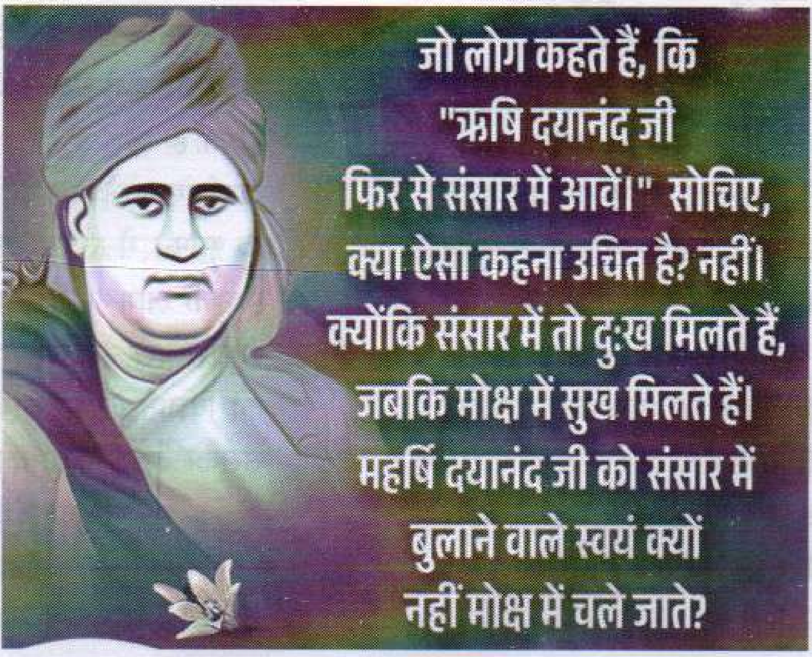

उस धर्मगुरु ने चिल्ला कर कहा कि मैं तो परमात्मा के दर्शन करना चाहता हूँ और स्वर्ग में प्रवेश पाना चाहता हूँ। उस द्वारपाल ने पूछा, तुम हो कौन और कहां से आए हो ? उसने कहा, क्या आपको पता नहीं ? मैं एक धर्मगुरु हूँ और पृथ्वी से आ रहा हूँ। उस हजार आंखे वाले व्यक्ति ने कहा मैं परमात्मा नहीं हूँ, मैं तो केवल यहां का पहरेदार हूँ यहां का द्वारपाल हूँ। तुम कहां हो, मुझे दिखाई नहीं पड़ते। तुम कितने छो हो और कहां छिप गए हो ?

उस धर्मगुरु ने चिल्ला कर कहा कि मैं तो परमात्मा के दर्शन करना चाहता हूँ और स्वर्ग में प्रवेश पाना चाहता हूँ। उस द्वारपाल ने पूछा, तुम हो कौन और कहां से आए हो ? उसने कहा, क्या आपको पता नहीं ? मैं एक धर्मगुरु हूँ और पृथ्वी से आ रहा हूँ। उस हजार आंखों वाले आदमी ने कहा, पृथ्वी ! यह पृथ्वी कहां है ? वह धर्मगुरु हैरान हुआ, उसने कहा, तुम्हें पृथ्वी का भी पता नहीं है। उस हजार आँखों वाले आदमीने कहा कि किस यूनिवर्स में, किस विश्व की पृथ्वी की तुम बात कर रहो हो ? करोड़ों यूनिवर्स है। करोड़ों विश्व हैं। प्रत्येक विश्व के करोड़ों सूरज हैं। प्रत्येक सूरज की अपी पृथ्वियाँ हैं। तुम किस पृथ्वी की बात करते हों ? क्या नंबर है तुम्हारी पृथ्वी का ? क्या इंडेक्स नंबर है ? उसे तो कुछ पता

नहीं था। उसने कहा कि हम तो एक ही विश्व को जानते हैं और एक ही सूरज को। और हमने इसलिए उनका कोई नाम नहीं रखा, कोई नंबर नहीं रखा।

उस पहरेदार ने कहा, तब बहुत मुश्किल है पता लगाना कि तुम कहां से आते हो। पहली बार ही इस द्वार पर पृथ्वी का नाम सुना गया है और मनुष्य, यह शब्द भी पहली बार ही मेरे कानों मं पड़ा है। उसके तो प्राण बैठ गए धर्मगुरु के ! सोचा था परमात्मा द्वार पर स्वागत को मिलेंगे। यहां तो इसका भी कोई बता नहीं है कि जिस पृथ्वी से वह आता है वह कहां है। फिर भी उस पहरेदार ने कहा, तुम निश्चिन्त रहो, मैं अभी पूछताछ करवाता हूँ, थोड़ा समय तो लग जाएगा। उस भवन में खोज करवाता हूँ कि तुम किस पृथ्वी की बातें करते हो, जहां सारी दुनिया की पृथ्वियां के संबंध में हमारे आंकड़े इकट्ठे हैं, नक्शे इकट्ठे हैं। लेकिन कुछ महीने लग जायेंगे, इसके पहले तो इसका पता लगाना कठिन है कि तुम कहां से आते हो और किस जाति के हो और क्या प्रयोजन है तुम्हारा यहां आने का।

उसने कहा, मैं परमात्मा के दर्शन करना चाहता हूँ। उस पहरेदार ने कहा, अनन्त वर्ष हो गए मुझे इस द्वार पर, अभी तो मैं भी परमात्मा के दर्शन नहीं कर पाया हूँ। और अब तक मैं ऐसे व्यक्ति को भीनहीं मिला हूं इस स्वर्ग के द्वार पर जिसने परमात्मा के दर्शन किए हों। परमात्मा की पूरी सृष्टि को ही जान लेना कठिन है, परमात्मा को जानना तो और भी कठिन है। वह तो समग्रता का ही नाम है। घबराहट में उस धर्मगुरु की नींद टूट गई। वह पसीने से लथपथ था। घबरा गया था। फिर रात भर उसे नहीं आ सकी। वह बार-बार यही सोचता रहा कि कहीं मनुष्य ने अपने अहंकार के ही प्रभाव में तो ये सारी बातें नहीं सोच ली हैं कि परमात्मा ने आदमी को अपनी ही शक्ल में बनाया और परमात्मा आदमी से मिलने को उत्सुक है और पुकार रहा है ? और स्वर्ग के द्वार और मोक्ष, ये कहीं मनुष्य ने अपने ही मन की कल्पनाएँ तो नहीं खड़ी कर ली है ?

ऐसे व्यक्ति को मैं धार्मिक नहीं कहता हूँ। धार्मिक व्यक्ति वह है जो अपनी इस नथिंगनेस को, इसे ना-कुछ होने को अनुभव कर लेता है। जिस दिन यह ना-कुछ होना अनुभव हो जाता है, उसी दिन जीवन के कोई बन्द द्वार खुल जाते हैं।

सुभाषितम्

राज मूर्खता

शास्त्रोपस्कृतशब्दसुन्दरगिरः शिष्यप्रदेयागमा,
विख्याताः कवयो वसन्ति विशये यस्य प्रभोर्निर्धनाः।
तज्जाड्यं वसुधाधिपस्य सुधियस्त्वर्थ विनापीश्वराः,
कुत्सा स्युः कुपरीक्षका हि मणयो यैरर्धतः पातिताः॥

अर्थात् : शास्त्रों के अनुशीलन से सुन्दर एवं अलंकृत वाणी का प्रयोग करने वाले तथा शिष्यों को शास्त्रों का उपदेश देने वाले प्रसिद्ध कवि भी जिस राजा के राज्य में निर्धनता से दुःखी होकर निवासी करते हैं तो इससे राजा की मूर्खता ही सिद्ध होती है। कविगण तो धन के बिना भी विद्यारुपी धन से समलंकृत है। यदि जौहरी मणि का ठीक मूल्य नहीं आंकता तो इसमें जौहरी की ही मूर्खता है, मणि की नहीं।

प्रासंगिक अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन वर्तमान युग की आवश्यकता

– ओमप्रकाश आर्य

रोहिणी दिल्ली में दिनांक 30, 31, अक्टूबर व 1,2 नवम्बर 2025 को चार दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन आयोजित होने जा रहा है, जिसमें लगभग 30 देशों के आर्य अपनी उपस्थिति से 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' की प्रासंगिकता का प्रतिनिधित्व करेंगे और इस धरती को श्रेष्ठ मानवों से विभूषित करने में अपना मुख्य योगदान निर्वहन करने का सत्संकल्प भी लेंगे। महर्षि दयानन्द सरस्तवी की 200वीं जयन्ती एवं आर्यसमाज स्थापना के 150वें वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित होने वाला यह आर्य महासम्मेलन पूरे विश्व के लिए महती प्रेरणा का स्रोत सिद्ध हो, ऐसा हम आर्यों को प्रयत्न करना है। इस सम्मेलन को पूरा विश्व देखकर वेदों का शंखनाद सुनने के लिए लालायित हो ऐसी भावना लेकर आर्यों को जाना है, क्योंकि सारा जगत् आज अवैदिक विचारों की मलिन धारा में डूब उतर रहा है, कहीं शान्ति नहीं है। जैसे आज अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस अखिल विश्व मनाता है, उसी प्रकार आर्यसमाज स्थापना दिवस भी पूरा विश्व मनाएं, ऐसा प्रभाव आर्यों को डालना पड़ेगा। यह पृथ्वी आर्यों को ही पुकार रही है, अन्य किसी को नहीं। यह बात अपनी अन्तरात्मा से सुन सकते हैं। उसी की परिणति आगामी अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन 2025 का होगा।

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन क्यों आवश्यक है ? यह वैज्ञानिक युग आज एक विशाल कुटुम्ब के रुप में परिणत हो गया है। परिवार में सुख शान्ति हो तो अच्छा लगता है, यदि उसमें कलह, लड़ाई-झगड़ा, ईर्ष्या, द्वेष, मनमुटाव, स्वार्थपरता, अहंकार, वैमनस्यता हो तो वह परिवार नरक का रुप धारण कर लेता है फिर उसमें कोई आसुरी प्रवृत्ति का हो तो वह और जटिल समस्या का जाल-जंजाल सिद्ध हो जाता है। परमपिता परमात्मा ने यह भूमि आर्यों को दी है। यहां आर्यों का ही साम्राज्य होना चाहिए। इस दृष्टि से पूरी धरती पर एक दृष्टि डालकर देखिए तो विदित हो जाएगा कि आज मानव ही मानव के लिए खतरा बना हुआ है। कहीं एक देश दूसरे देश को मिटाने पर आमादा है, कहीं एक समुदाय-सम्प्रदाय पूरी धरतीको अपने अधिकार में लेना चाहता है। कहीं अन्य वर्ग को मारकर जन्नत प्राप्त करना चाहता है। कहीं जीव को तड़पाकर मारना धर्म माना जा रहा है, कहीं निर्धन, जरुरतमंद को लालच में फंसाकर अपने जाल में फंसाया जा रहा है, कहीं दुनियां को बनाने वाले परमेश्वर को ही बनाकर मानव उसी को सर्वस्व समर्पम करने को तैयार है। कहीं अधर्म को ही अज्ञानता में धर्म मानकर अपनाकर अन्धश्रद्धा में बहा जा रहा है। सर्वत्र अवैदिक विचारों का बोलबाला है। मीडिया भी उसी अवैदिक विचारों का दिन-रात प्रचार करने में लगा हुआ है। क्या-क्या बताया जाए ; भूत-प्रेत की शंका अभी भी है। शुभ मुहूर्त का चक्कर बड़े-बड़े डिग्रीधारी को नचा रहा है। मंगल तक यान पहुंचने के बाद भी मनुष्य मंगला-मंगली की भावना नहीं छोड़ पा रहा है। जन्मकुंडली, दिशाशूल, मृतक के नाम पर कर्मकांड, जड़पूजा, आकाशीय बहुदेवता की मान्यता, जादू-टोना-टोटका आदि आज भी लोगों को गुमहराह कर रहे हैं। ढोंग-पाखंड बढ़ा ही है घटा नहीं। रोज एक भगवान और एक देवता गली-मोहल्ले में जन्म ले रहा है। यहां तक कि मनुष्य अपने को साक्षात्-ईश्वर बना लिया है और कामनाएं पूरी कर रहा है। प्राकृतिक घटनाओं को चमत्कार मानकर उसी की उपासना करने लग जाता है।

भारत ही नहीं अपितु अवैदिक विचार हर

देश में मिल जाएंगे। अन्धविश्वास और पाखंड भी मिलेंगे । इन सबका एकमात्र कारण है वेदों की विचारधारा से दूर हो जाना । जैसे-जैसे संसार वेदों से दूर होता गया, वैसे-वैसे अज्ञान-अन्धकार भी बढ़ता गया । वेदों से यही दूरी आसुरी प्रवृत्तियों को जन्म दिया । स्थिति यह है कि छोटे-छोटे बच्चों को मारकाट, हिंसा, क्रूरता का पाठ पढ़ाया जाता है । वही बच्चा आगे चलकर उपद्रव और अशान्ति का कारण बनकर पूरे विश्व के लिए एक बड़ी समस्या बन जाता है । वह मौत से भी नहीं डरता है, क्योंकि उसे वैसे ही पाठ पढ़ाया गया है । जब तक बच्चा वैदिक शिक्षा नहीं पाएगा तब तक उसका विचार भी उज्ज्वल नहीं होगा ।

बढ़ता हुआ भौतिकवाद और पर्यावरण की समस्या मानव को चैन से नहीं रहने देगी । संस्कारहीनता और वैदिक मूल्यों का अभाव मानव को राक्षश बनाएगा। महाशक्तियों के टकराने से धरती का ही विनाश होगा। प्रकृति के साथ छेड़छाड़ प्राकृतिक आपदा को जन्म देगा । संहारक अस्त्र-शस्त्र संहार ही करेंगे सृजन नहीं। यदि संहारक बुद्धि को सर्जक बुद्धि में बदल दिया जाए तो धरती का रुप ही कुछ और होगा । यह कार्य केवल और केवल वेद ही कर सता है । उसी में यह सामर्थ्य है । इसीलिए विश्व को वेदों की ओर लौटने का आह्वान यह अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन कर रहा है । इस सम्मेलन में आनेवाला हर आर्य अपने को एक मशाल समझे । महर्षि दयानन्द के मिशन को आगे बढ़ाने में अपना अप्रतिम योगदान दे । यह महासम्मेलन आर्यों का महाकुम्भ है । इस महाकुम्भ की ज्ञानगंगा में स्नान कर अपने जीवन को सार्थक बनाएं। हमारा यह सांगठनिक प्रदर्शन है । हमारी एकता, अखंडता, सार्वभौमिकता, वेदप्रियता, वेदप्रचार, मेल-जोल, परस्पर दर्शन का एक अनूठा संगम है । यहां आकर हम अपनी स्थिति और आर्यसमाज के आर्यों की संख्या का भी आकलन कर सकेंगे और आगामी योजना को नया रुप देने में सफल होंगे । समाज को विश्व पटल पर लाने की आवश्यकता है । अवैदिक विचारों के प्रवाह में अपने को अटल शिक्षा के समान बनना पड़ेगा, तभी कुछ कर सकेंगे । 90% अवैदिक विचार छाए हुए हैं । ऐसी स्थिति में सत्यार्थप्रकाश और वेद को हाथ में लेकर गली, मुहल्ले में सर्वत्र घूमना होगा। चारों ओर आसुरी प्रवृत्तियों का जाल बिछा हुआ है । उस जाल में लोगों को फंसाने के षड़यंत्र चल रहे हैं।

आज के परिप्रेक्ष्य में अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलनों की महती आवश्यकता है । वेदमाता धरती के कोने-कोने में बसे लोगों को अपना सन्देश देना चाहती है । अपना ज्ञान लुटाना चाहती है । इस दृष्टि से यह महासम्मेलन मानवमात्र के लिए प्रेरणादायक है । हम आर्य विश्व के कोने-कोने में आर्यसमाज की विचारधारा को पहुंचा दें, जिससे दुनिया को पता चले कि आर्यसमाज मानव को मानव बनाने में सक्रिय भूमिका निभाता है । यह श्रेष्ठ लोगों का संगठन है । विश्व को अपना वृहद् परिवार मानता है । यही अवसर है वैश्विक आर्य चिन्तन का ।

- पता : आर्यसमाज रावतभाठा, वाया कोटा (राज.) 323307

वैचारिक

व्यक्ति के विकास की यात्रा

– रितेश प्रधान

जो जन्म पर ही अटक कर रह गया है, वह जीवन से जाने से वंचित ही रहा । बहुत कम लोग हैं जो जन्म के बाद बढ़ते हैं । जन्म के बाद बढ़ना चाहिए। जन्म तो सिर्फ शुरुआत है, अन्त नहीं है । जन्म तो यात्रा का पहला कदम है, मंजिल नहीं है । जन्म तो सिर्फ अवसर है, जीने का, जीवन को जानने का । इस अवसर को लेकर ही मत बैठ जाना ।

जन्म तो ऐसे हैं, जैसे अनपढ़ पत्थर । छैनी कब उठाओगे ? इस पत्थर को मूर्ति कब बनाओगे ? इस पत्थर में प्राण कब डालोगे ? अधिक लोग अनगढ़ पत्थर की तरह पैदा होते हैं, अनगढ़ पत्थर की तरह मर जाते हैं । उनकी मूर्ति निखर ही नहीं पाती । उनके भीतर जो छिपा था, छिपा ही रह जाता है । जो गीत गाया जाना था, बिन गाया चला जाता । जो नृत्य होना था, नहीं हो पाता । जो अपना गीत गा लेता है, वही बुद्ध है । जो अपना नाच नाच लेता है, वही बुद्ध है । जो अपनी भीतर छिपी हुई सम्भावनाओं को अभिव्यक्त कर देता है, अभिव्यंजित कर देता है, गुनगना लेता है, वही बुद्ध है । और वही कृतकार्य है । वही फल को, फूल को उपलब्ध हुआ ।

अधिक लोग बीज की तरह मर जाते हैं । कुछ थोड़े से लोग अंकुरित होते हैं और मर जाते हैं। कुछ थोड़े से लोग वृक्ष भी बन जाते हैं, लेकिन उनमें कभी फूल नहीं लगते, फल नहीं लगते और मर जाते हैं । जब फूल खिलता है, तुम्हारे जीवन का, जब तुम्हारी चेतना सहस्रदल कमल बनती, तभी जानना **कि ब्राह्मण हुए ।**

शूद्र :– इसे ऐसा समझो कि सभी लोग शूद्र की तरह पैदा होते हैं, फिर शूद्र के बाद दूसरा कदम है वैश्य का । कुछ लोग वैश्य बन जाते हैं । वैश्य का मतलब है, पौधा पैदा हुआ, बीज फूचा, कुछ अंकूल निकेले । शूद्र बिल्कुल ही देह में जीता है । मन का भी उसे पता नहीं, आत्मा की तो बात दूर । परमात्मा का तो सवाल ही कहां उठता है । तुम सोचते हो कि शूद्र वह है, जो मल–मूत्र ढोता है । तो तुम गलत हो । यह मल–मूत्र में जो जी रहा है, जिसका जीवन मल–मूत्र के पार नहीं गया है जिसे पता ही नहीं देह के बाहर कुछ । भोजन कर लेता है, मल–मूत्र से निष्कासित कर देता है, फिर भोजन कर लेता है । ऐसा ही जिसका जीवन है । इन्द्रियों से पार जिसे कुछ पता नहीं, ऐसा आदमी शूद्र है । मल–मूत्र की सफाई करने वाला शूद्र नहीं है। मल–मूत्र को ही जीवन समझ लेने वाला शूद्र है ।

वैश्य :– इससे थोड़ा कोई ऊपर उठता है, तो अंकुल फूटता है, वैश्य बनता है । वैश्य को शूद्र से थोड़ी सी ज्यादा समझ है । उसके भीतर मन में थोड़ी उमंगे उठनी शुरु होती है, पद, प्रतिष्ठा, धन, सम्मान, सत्कार । **भोजन और कामवासना** – इतने ही पर वैश्य समाप्त नहीं होता । वैश्य जीवन के व्यवसाय में लगता है । कुछ और भी मूल्यवान है । लेकिन वैश्य भी सिर्फ अंकुरित हुआ । जो वैश्य की तरह मर जाए, वह भी कुछ बहुत दूर नहीं गया शूद्र से ।

क्षत्रिय :– फिर होता है क्षत्रिय । क्षत्रिय का अर्थ होता है, योद्धा, संकल्पवान् । जीवन को अब पैसा ही नहीं जी लेता, जैसा जन्म से पाया है । युद्ध करता है जीवन को निखारने का, उठाता है तलवार । काट देता है, जो गलत है । मिटा देता है जो व्यर्थ है । सार्थक की तलाश में लगता है । संघर्षरत होता है । जीवन उसके लिए एक चुनौती है, व्यवसाय नहीं ।

क्षत्रिय का आयाम संघर्ष का आयाम है, चुनौती का आयाम है । चाहे सब गंवाना पड़े, लेकिन दांव लगाओ । क्षत्रिय जुआरी है, व्यवसायी नहीं है । क्षत्रिय वृक्ष बन जाता है । जब जूझता है तो ही कोई वृक्ष बनता है । ये वृक्ष भी जुझते हैं, तो ही ऊपर उठ पाता है । इनकी बड़ी संघर्ष की कथा है । जब एक वृक्ष बनना शुरु होता है, तो कितना संघर्ष है, उसके

सामने। नीचे जमीन में पड़े पत्थर है, जिनको तोड़कर जड़ें पहुंचानी है। कठोर भूमि है, जिसमें रास्ता बनाना जलस्रोत खोजने हैं। क्षत्रिय अपने पर भरोसा करता है, इसलिए जाता है, वैश्य से आगे जाता है। लेकिन अपने भरोसे की सीमा है। तुम्हारी सामर्थ्य कितनी ? एक दिन संकल्प थक जाएगा। क्षत्रिय

ब्राह्मण :– ब्राह्मण का अर्थ :– समर्पण। क्षत्रिय का अर्थ है, संकल्प। क्षत्रिय लड़ता है, जीतने की चेष्टा करता है, लेकिन एक न एक दिन हारेगा। क्योंकि व्यक्ति की सीमा चुक जाएगी। समष्टि के सामने व्यक्ति का क्या मुकाबला है। जितनी दूर तक व्यक्ति की ऊर्जा जा सकती है, जाएगा, फिर ठहर जाएगा।

वहीं से ब्राह्मण शुरु होता है। अपनी सारी सामर्थ्य लगा दी, तब उसे पता चलता है कि मुझ से भी बड़ा कोई है। मैं लडूं क्यों ? उसका सहारा क्यों न ले लूं ? मैं नदी से संघर्ष क्यों करूं ? मैं नदी के साथ बहने क्यों न लगूँ ? समर्पण शुरु होता है। ब्राह्मण की दशा समर्पण की दशा है। वह परमात्मा के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ लेता है। जब कोई किसी गुरु से अपना सम्बन्ध जोड़ता है, तो ब्राह्मण होने की शुरुआत हुई। इस आदमी को यह बात दिखायी पड़ गयी कि मेरे हाथ से जितना हो स कता था, मैंने कर लिया, अब मुझे विराट का प्रसाद चाहिए। अब मुझ परमात्मा का सहारा चाहिए। अब मुझे अपनी असहाय अवस्था का बोध होता है। इस स्थिति में व्यक्ति ब्राह्मण बनना शुरु होता है। और जब समग्र समर्पण हो जाता है, जब सब भांति व्यक्ति अपने को विसर्जित कर देता है, असीम मैं, सीमाएं खो जाती हैं, जैसे बूंद सागर में गिर जाए, ऐसे जब कोई विराट में गिर जाता है, और उस गिरने में ही जानता है विराट के स्वाद को–तब पूरा ब्राह्मण हुआ। तब फूल लगे, फल लगे। तब सुगन्ध बिखरी। तब कोई कृतसंकल्प हुआ, कृतकार्य हुआ। तब पहुंच गया वहां, जहां पहुंचना था। नियति उपलब्ध हुई। तभी तृप्ति है। उसके पूर्व कोई तृप्ति नहीं है।

"संस्कार"

कहा जाता था कि बच्चें अच्छे संस्कार
अपने परिवार से ग्रहण करते हैं
वह सच्चाई तो आज भी कायम है
पर परिवारों की परिभाषा बदल गई है।
आज माइक्रो परिवारों का युग है
जिसमें केवल पति–पत्नि और बच्चा है,
पति–पत्नि भागते काम पर जाते हैं
थक हार कर देर से लौट पाते हैं
उन्हें अपनी होश नहीं रहता है
वे बच्चे को किसी तरह पालते हैं
संस्कार देने आदर्श प्रस्तुत करने की
बात ही उनके ध्यान में नहीं आती है
बच्चा बमुश्किल तीन साल का होता है
कि प्ले स्कूल में डाल दिया जाता है.
फिर तो वह कोचिंग होमवर्क की
भागमभाग में चक्करिघन्नी बन जाता है
उसके बाद अच्छे संस्कार देने–लेने का
ख्याल ही कब किसको आता है ?

ओमप्रकाश बजाज,
पता – पो.बा. 595, जीपीओ,
इंदौर, (म.प्र.) 452001

सुखी जीवन के लिए अच्छे घर का होना जरुरी नहीं, घर का माहौल अच्छा होना जरुरी है

विश्लेषणात्मक

श्राद्ध एवं तर्पण : वैदिक विवेचना

– लक्ष्मी स्वर्णकार, एम.ए., बी.एड.

आश्विन मास के कृष्ण पक्ष में पितरों का श्राद्ध व तर्पण पक्ष होता है जो भ्रान्त प्रथा का स्वरुप लेता जा रहा है । इस कारण पितर श्राद्ध व तर्पण शब्दों की वैदिक मान्यता के सन्दर्भ में विवेचना आवश्यक है । **"पालयन्ति रक्षन्ति वा ते पितरः"** अर्थात् पालन–पोषण और रक्षण करने वाले पितर कहाते हैं । गोपथ ब्राह्मण में भी लिखा है "देवा वा एते पितरः, स्विष्टकृतो वै पितरः" और सुख सुविधाओं द्वारा पालन, पोषण करने वाले और हित सम्पादन करने वाले लोग पितर कहलाते हैं । शतपथ ब्राह्मण (2/1/3/4) के अनुसार "मर्त्याः पितरः" यानि मनुष्य ही पितर है । यजुर्वेद का मन्त्र (2/31) पितरों को इस प्रकार स्पष्ट करता है–

अत्र पितरो मादयध्वं यथा भागमा वृषायध्वम् ।
अमीमदन्त पितरो यथा भागमावृषायिषत ।।

भावार्थ :– ईश्वर आज्ञा देता है कि मनुष्य लोग माता–पिता आदि धार्मिक सज्जनों को समीप आए हुए देखकर उनकी सेवा करें । प्रार्थनापूर्वक कहें कि हे पितरों ! आप लोगों का आना हमारे सौभाग्य का सूचक है । आप हमारे गृह में आओ और वास करो हम आपके प्रिय पदार्थों को यथायोग्य यथा सामर्थ्य उपस्थित करेंगे । जिनके सत्कार को प्राप्त होकर आप प्रसन्न होइये और अपने अनुभव के आधार पर हमारे मार्ग प्रशस्त कीजिए ताकि हम वृद्धि को प्राप्त होवें, अच्छे कामों को करके आनन्दित रहें ।

वृहत् पाराशर स्मृति में पितरों का वर्गीकरण कर 12 (बारह) प्रकार के पितर बताये गये हैं : 1. सोमसदः 2. अग्निष्वाताः 3. बर्हिषदः 4. सोमपाः 5. हर्विभुजः 6. आत्यपाः 7. सुकालीनः 8. यमराजः 9. पितृ–पितामहाः 10. मातृ–पितामही–प्रपितामह्यः 11. सगोत्र 12. आचार्यदि सम्बंधिनः ।

इस प्रकार उपर्युक्त गुणों वाले जीवित व्यक्तियों को ही पितर कहा गया है । मृत–पितरों की कल्पना भ्रान्ति मात्र है । श्राद्ध अर्थात् 'श्रत्' सत्य का नाम है । **"श्रत्सत्यं दधाति यया क्रिया सा "श्रद्धा" श्रद्धया यत् क्रियते तच्छ्राद्धम्"** जिस क्रिया से सत्य का ग्रहण किया जाएगा, उसको "श्राद्ध" और जो श्राद्ध से कर्म किया जाए उसका नाम "श्राद्ध" है, और तृप्यन्ति तर्पयन्ति येन पितृन् तत्तर्पणम् जिस जिस कर्म से तृप्त अर्थात् विद्यमान माता–पितादि पितर प्रसन्न हों और प्रसन्न किये जाएं उसका नाम तर्पण है परन्तु यह जीवितों के लिए मृतकों के लिए कदापि नहीं । मनु महराज ने मनुस्मृति के अध्याय 3 श्लोक 70 में यज्ञ का वर्णन में इस प्रकार किया है –

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम् ॥

उपरोक्त अनुसार ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ तथा अतिथि यज्ञ बताये गये हैं । महर्षि दयानन्द सरस्वती पंचमहायज्ञ विधि लिखते हैं कि इन पंचमहायज्ञों को प्रतिदिन करना मानवमात्र का धर्म है । महर्षि पितृयज्ञ को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि जो पितर विद्यमान हो अर्थात् जो जीवित हो उनको प्रीति से सेवनादि से तृप्त करना तर्पण और श्रद्धा से प्रीतिपूर्वक सेवा करना है वह श्राद्ध कहलाता है व जो सत्य विज्ञान दान से लोगों का पालन करते हैं वे पितर कहलाते हैं ।

मनुस्मृति में श्राद्ध को दैनिक कर्म बताया गया है,

कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्येनोदकेन वा ।
पयोमूलफलैर्वापि पितृभ्यः प्रीतिमावहन् ।।
(3/83)

अर्थात् – गृहस्थ का कर्त्तव्य है कि माता–पिता आदि पूज्य महानुभावों का अन्नादि भोज्य पदार्थों से तथा जल, दूध और कन्द–मूल फलादि से प्रतिदिन श्राद्ध करें ।

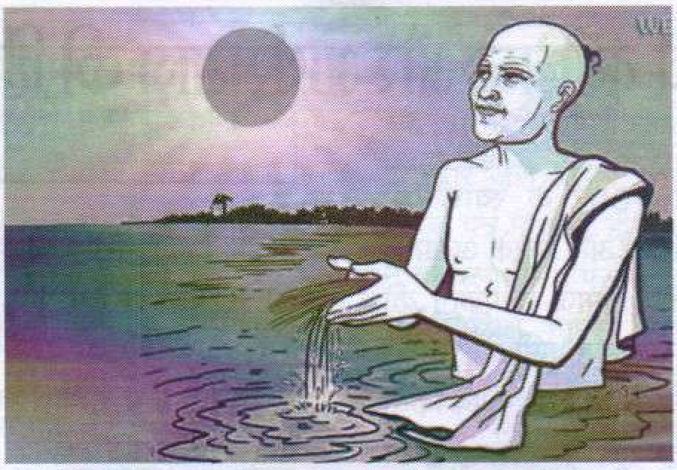

ऊर्ज वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिसुतम्। स्वधा स्थ तर्पयत् मे पितृन् ॥

भावार्थ : ईश्वर आज्ञा देता है कि सब मनुष्यों को पत्नी पुत्र और नौकर आदि को कहना चाहिए कि तुमको हमारे पितर अर्थात् माता-पिता आदि विद्या के देने वाले व सेवा के योग्य है। जैसे कि इन्होंने बाल्यावस्था व विद्यादान के समय पाते हैं, वैसे हम लोगों के बीच में विद्या का नाश और कृतघ्नता आदि दोष कभी न प्राप्त हों। महर्षि वाल्मीकि कृतघ्नता को महापाप मानते हैं रारामायण में लिखते हैं -

"गोघ्ने चैव सुरापे च, चौरो भग्नव्रते तथा।
निष्कृतिर्विहिता सद्भिः कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः॥"

अर्थात् : गोहत्यारे, शराबी, चोर, और व्रत भंग करने वाले का प्रायश्चित सत्पुरुषों ने बताया है, किन्तु कृतघ्न (क्योंकि यह तो महापाप है) का कोई प्रायश्चित पितृयज्ञ के अन्तग्रत प्रतिदिन करने का कर्म है तो केवल आश्विन मास के पन्द्रह दिनों में एक पितर के लिए केवल एक दिन श्राद्ध कनरे का क्या औचित्य है ? क्या वे शेष 364 दिन भूखे प्यासे पड़े रहते हैं ? साथ ही उन्हेंकेवल कौविच-कौवच के रुप में ही क्यों आह्वान किया जाता है ? लेकिन प्रश्न निरुत्तर है। कभी-कभी पौराणिक भाई यह कहते हैं कि इस बहाने कौओ जैसे पक्षी की भी पेट भराई हो जाती है किन्तु पंच महायज्ञों में जो प्रतिदिन करणीय है उनमें चौथा यज्ञ बलिवैश्वदेव यज्ञ है जिसमें मुक पशु पक्षी, कृमि, कौआ, पाप रोगी तथा चण्डाल आदि के लिए भी व्यवस्था है। मनुस्मृति (03/92) में मन्त्र आया है-

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।
वायसानां कृमीणां च शनकें निर्वपेत् भुवि ॥

अर्थ - कुत्ता, पतित, चण्डाल, पापरोगी, काक (कौवा) और कृमि इन छह नामों से छह भाग पृथ्वी पर घरे और वे भाग जिस जिस नाम के हो उस-उस को देवें।

जैसा पौराणिकों ने पितरों (मृतक) को कौआ या पशु पक्षी आदि के रुप में आङ्वान करने का मानते हैं वैसा तो कदापि संभव नहीं तथा ही शास्त्रोकृता क्योंकि अपने किए कर्मों से ही जीव जाति (योनि), आयु और भोग प्राप्त करता है। पूर्व सम्बन्धी इसमें कुछ भी सहायक नहीं।

श्रीकृष्ण के गीता में दिये उपदेश भी इसकी पुष्टि करते हैं। हे अर्जुन ! मेरे और तेरे अनेक जन्म बीत चुके हैं। मैं उन सब जन्मों को जानता हूँ, तू नहीं जानता। एक अन्य स्थान पर वैसे ही मृत्यु होने पर अन्य देह की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार जब व्यक्ति का मरने के बाद किस स्थान पर जन्म हुआ, किस परिवार में अथवा देश में, यहां तक किस योनि में गया है ज्ञात नहीं तो उसका श्राद्ध व तर्पण कैसे होगा ? हमारे परिवार में नवजात शिशु कहां से आया है, किस योनि अथवा परिवार से आया है, उसके लिए किन्हीं द्वारा किया गया दान जब हमारे पास नहीं पहुंचता तो हमारे द्वारा कियागया दान उनके पास कैसे पहुंचेगा। निश्चित श्राद्ध व तर्पण जीवित पितरों का पितृ यज्ञ के अन्तर्गत ही करने योग्य है। यहीं मानव के लिए कल्याणकारी है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है -

तृतीय यज्ञ है पितृ यज्ञ, पिता माता की सेवा करना,
आचार्य व विद्वानों की शिक्षा निज चित में धरना।
जो माता-पिता, गुरुजन की सेवा के चित चुराए,
निश्चय समझो बस वह प्राणी घोर क्लेश उठाए ॥

पता - बांगड़ी मोहल्ला, बीकानेर (राजस्थान)

विशेष महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज की हिंदी भाषा को देन

– कृष्णदेव शास्त्री

स्वामी दयानन्द ने 1857 के स्वाधीनता संग्राम को असफल होते देखा था और उसके असफल होने का मुख्य कारण भारतीय समाज में एकता की कमी होना था। स्वामी दयानन्द ने इस कमी को समाप्त करना आवश्यक समझा। उन्होंने चिन्तन-मंथन किया कि अगर भारत देश को एक सूत्र में जोड़ना है तो उसकी एक भाषा होना अत्यंत आवश्यक है। यह रिक्त स्थान अगर कोई भर सकता था तो वह हिंदी भाषा थी। स्वामी दयानन्द द्वारा सर्वप्रथम 19वीं सदी के चौथे चरणमें एक राष्ट्र भाषा का प्रश्न उठाया गया और स्वयं गुजराती भाषी होते हुए भी उन्होंने इस हेतु आर्यभाषा (हिंदी) को ही इस पद के योग्य बताया। अपने जीवन काल में स्वामीजी ने भाषण, लेखन, साश्त्रार्थ एवं उपदेश आदि हिंदी में देने आरंभ किये जिससे हिंदी भाषा का प्रचार आरंभ हुआ और सबसे बढ़कर जनसाधारण के समझने के लिये हिंदी भाषा में वेदों को समझने के लिये हिंदी भाषा में वेदों का भाष्य किया। इससे हिन्दू साहित्य और भाषा को नये उपादान प्रदान किये प्रत्येक आर्यसमाजी के लिए हिंदी भाषा को जानना प्रायः अनिवार्य कर दिया गया।

स्वामी जी इससे पहले संस्कृत में भाषण करते थे इसलिये केवल पठित पंडित वर्ग ही उनके विचारों को समझ पाता था। कालान्तर में जब उन्होंने हिंदी भाषा में व्याख्यान प्रारंभ किये तो उससे जन साधारण की उपस्थिति न केवल अधिक हो गई अपितु जनता के लिये उनके प्रवचों को ग्रहण करना आसान हो गया। स्वामी जी ने अपने संपर्क में आने वाले सभी देशी राजाओं को अपने राजकुमारों को हिंदी के माध्यम से धार्मिक शिक्षा दिलवाने की सलाह दी थी जिससे उनमें देश-भक्ति का सूत्रपात हो सके।

> सामान्य दिनों में तो व्यक्ति स्कूल, कॉलेज, गुरुकुल आदि संस्थाओं में बहुत कुछ सीखता है। परंतु संकट की घड़ी में (गंभीर रोग से पीड़ित हो जाने पर) भी व्यक्ति कुछ विशेष बातें सीखता है। आनन्द के समय में तो अनेक बार पिछली शिक्षाएं भी भूल जाता है। जैसे विवाह के अवसर पर व्यक्ति शराब पीकर बहुत सी सभ्यताएं भूल जाता है।

स्वामी जी द्वारा अपने सभी ग्रन्थ हिंदी भाषा में रचे गये जैसे सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेवादिभाष्यभूमिका, वेद-भाष्य आदि। इनके सैकड़ों संस्करण छपे और देश में उनके प्रचार से हिन्दी भाषा के प्रचार को जो गति मिली उसका पाठक सहजता से अनुमान लगा सकते हैं।

1882 में भारतीय शिक्षण संस्थाओं में भाषा के निर्धारण को लेकर 'हन्टर कमीशन' के नाम से कोलकाता में आयोग का गठन सर विलिमय हंटर की अध्यक्षता में किया गया था। स्वामी दयानन्द ने इस कमीशन के समक्ष हिंदी को शिक्षा की भाषा निर्धारित करने के लिये आर्यसमाजों को निर्देश दिया कि वे हिन्दी भाषा के समर्थ में हंटर आयोग में अपनी सम्मति भेजें। फर्रुखाबाद, देहरादून, मेरठ, कानपुर, लखनऊ आदि आर्यसमाजों को भी इस विषय पर कोलकाता पत्र भेजने को कहा था।

हिंदी भाषा भारतीय जनमानस की मानसिक भाषा है इसलिए उसे ही पाठ्यक्रम की भाषा के रुप में स्वीकृत किया जाये ऐसा समस्त आर्यसमाज द्वारा हिंदी भाषा के प्रचार के लिए प्रयत्न किया गया था। निश्चित रुप से हिंदी भाषा के प्रचार के लिये यह कार्य ऐतिहासिक महनव था।

स्वामी जी के देहांत के पश्चात् आर्यसमाज के सदस्यों ने हिंदी भाषा के प्रचार-प्रचार में दिन रात एक कर दिया। आर्यसमाज के सदस्यों द्वारा लाखों पुस्तकें हिंदी भाषा में अलग अलग विषयों पर लिखी गई। गद्य,

पद्य, काव्य, निबंध आदि सभी प्रकार के साहित्य की रचना हिंदी भाषा में हुई । हजारों पत्र–पत्रिकाओं का हिंदी भाषा में प्रकाशन हुआ । सैकड़ों पाठशालाओं, विद्यालयों गुरुकुलों के माध्यम से हिंदी भाषा का सम्पूर्ण भारत में नहीं अपितु विदेशों में जैसे मारीशस, फिजी, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में भी हिंदी भाषा का प्रचार प्रसार हुआ ।

आर्य दर्पण (आर्यसमाज का सर्वप्रथम हिंदी पत्र), आर्य भूषण, आर्य समाचार, भारतसुदशा प्रवर्तक, वेदप्रकाश, आर्यपत्र, आर्यविनय, आर्य सिद्धान्त, आर्यभागिनी आदि अनेक पत्र तो विभिन्न आर्य संस्थाओं द्वारा 20वीं शताब्दी आरम्भ होने से पहले ही निकलने आरम्भ कर दिए थे । 20वीं शताब्दी में इनकी संख्या इतनी थी कि इस लेख में उन्हें समाहित करना संभव नहीं है । पाठक इस उल्लेख से समझ सकते हैं कि आर्यसमाज के प्रचार का माध्यम हिन्दी होने के कारण हिंदी भाषा के उत्थान में आर्यसमाज का क्या योगदान था ।

स्वामी जी के प्रशंसक भारतेन्द्र हरिश्चन्द की हिंदी भाषा को देन से साहित्य जगत भली प्रकार से परिचित है । कालान्तर में मुंशी प्रेमचंद, कहानीकार सुदर्शन, आचार्य रामदेव, बनारसीदास चतुर्वेदी, इंद्र विद्यावाचस्पतिक, सुमित्रानन्दन पन्त, मैथिलीशरण गुप्त, पद्म सिंह शर्मा आदि से आरंभ होकर हरिवंशराय बच्चन, विष्णु प्रभाकर, क्षितीश वेदालंकार आदि तक हजारों की संख्या में आर्यसमाज से दीक्षित और अनुप्राणित साहित्यकारों ने हिंदी साहित्य की रचना की जिससे हिंदी समस्त भारत की साहित्यिक भाषा के रुप में स्थापित हो गई ।

स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने पत्र सद्धर्म प्रचारक को एक रात में उर्दू से हिंदी में परिवर्तित कर दिया, उन्हें आर्थिक हानि अवश्य उठानी पड़ी पर उनके पत्र की प्रसिद्धि को देखते हुए उसे पढ़ पाने की इच्छा ने अनेक पाठकों को देवनागरी लिपि सीखने के लिए प्रेरित किया ।

पत्रकारिता में नये आयाम आर्यसमाज के सदस्यों ने स्थापित किये । पंजाब के सभी प्रसिद्ध अखबार जैसे प्रताप, केसरी, अर्जुन, युगान्तर आदि अनेक पत्र हिंदी में ही निकलते थे, जो आर्यसमाजियों ने ही चलाए थे । पंजाब के जन अंचल में उस काल में उर्दू मिश्रित फारसी भाषा बोली जाती थी जिसके प्रचार में उर्दू पत्र जमींदार आदि का पूरा सहयोग था।

सैकड़ों गुरुकुलों, डी.ए.वी. स्कूल और कालेजों में हिंदी भाषा को प्राथमिकता दी गई और इस कार्य के लिए नवीन पाठ्यक्रम की पुस्तकों की रचना हिंदी भाषा के माध्यम से गुरुकुल कांगड़ी एवं लाहौर आदि स्थानों पर हुई जिनके विषय विज्ञान, गणित, समाजशास्त्र, इतिहास आदि थे । यह एक अलग ही किस्म का हिंदी भाषा में परीक्षण था जिसके वांछनीय परिणाम निकले ।

विदेशों में भवानी दयाल सन्यासी, भाई परमानन्द, गंगा प्रसाद उपाध्याय, डॉ. चिरंजीव भारद्वाज, मेहता जैमिनी, आचार्य रामदेव, पंडित चमूपित आदि ने हिंदी भाषा का प्रवासी भारतीयों में प्रचार किया जिससे वे मातृभूमि से दूर होते हुए भी उसकी संस्कृति, उसकी विचारधारा से न केवल जुड़े रहे अपितु अपनी विदेश में जन्मी सन्तति को भी उससे अवगत करवाते रहे । आर्यसमाज द्वारा न केवल पंजाब में हिंदी भाषा का प्रचार किया गया अपितु सुदूर दक्षिण भारत में, आसाम, बर्मा आदि तक हिंदी को पहुंचाया गया । न्यायालय दुष्कर भाषा के स्थान पर सरल हिंदी भाषा के प्रयोग के लिए भी स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा प्रयास किये गये ।

वीर सावरकर हिंदी भाषा को स्वामी दयानन्द के देन पर लिखते हैं – "महर्षि दयानन्द द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश में जिस हिंदी के दर्शन हमें मिलते हैं, वहीं हिंदी हमें स्वीकार है । यह सरल, अनावश्यक विदेशी शब्दों से अलिप्त होकर भी अत्यन्त अर्थ वाहक तथा प्रवाही है । महर्षि दयानन्द ही सर्वप्रथम नेता थे, जिन्होंने हिन्दुस्तान के अखिल हिन्दुओ की राष्ट्र भाषा

हिंदी है । ऐसा उद्घोष व प्रयास किया था ।"

शहीद भगतसिह ने पंजाब की भाषा तथा लिपि विषयक समस्या के विषय में अपने विचार भाषाण के रुप में प्रस्तुत करते हुए हिंदी भाषा के समर्थन में कहा था कि – "बहुत से आदर्शवादी सज्जन समस्त जगत को एक राष्ट्र, विश्व राष्ट्र बना हुआ देखना चाहते हैं । यह आदर्श बहुत सुन्दर है । हमकों भी इसी आदर्श को साने रखना चाहिए । उस पर पूर्णतया आज व्यवहार नहीं किया जासकता, परन्तु हमारा हर एक कदम हमारा हर एक कार्य इस संसार की समस्त जातियों, देशों तथा राष्ट्रों को एक सुदृढ़ सूत्र में बांधकर सुख वृद्धि करने के विचार से उठना चाहिए। उससे पहले हमकों अपने देश में यही आदर्श कायम करना होगा। समस्त देश में एक भाषा, एक लिपि, एक साहित्य, एक आदर्श और एक राष्ट्र बनाना पड़ेगा, परन्तु समस्त एकताओं से पहले एक भाषा का होना जरुरी है, ताकि हम एक दूसरे को भलीभांति समझ सके । एक पंजाबी और एक मद्रासी इकट्ठे बैठकर केवल एक दूसरे का मूंह ही न ताका करें, बल्कि एक-दूसरे के विचार तथा भाव जानने का प्रयत्न करें । परन्तु यह पराई भाषा अंग्रेजी में नहीं, बल्कि हिन्दुस्तान की अपनी भाषा हिंदी में होना चाहिए ।"

महात्मा गांधी हिंदी भाषा के कितने बड़े समर्थक थे इसका पता उनके इस कथन से मिलता है जब उन्होंने कहा था कि जगदीशचन्द्र बसु आदि विद्वानों के आविष्कार जनता की भाषा में प्रकट किये जाते तो जिस प्रकार तुलसी रामायण जनता की भाषा में लिखी होने के कारण अपनी चीज बनी हुई हैं, उसी प्रकार से विज्ञान की चर्चायें, विज्ञान के आविष्कार जनता के जीवन को प्रभावित करते । स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज हिंदी भाषा को देन निश्चित रुप से अविस्मरणीय एवं अनुकरणीय है ।

"नवप्रभात गुरुकुल की स्वर्णिम उपलब्धि"

डॉ. मनन कुमार अग्रवाल का जनम 27-2-1994 को कांटाबाजी, जिला-बलांगीर ओड़िशा में एक सामान्य परिवार में हुआ । आरंभिक शिक्षा कांटाबाजी के सरस्वती शिशु मंदिर से प्राप्त की । अग्रिम शिक्षा कक्षा छठी से लेकर बारहवीं तक गुरुकुल नवप्रभात वैदिक विद्यापीठ से पूर्ण की । यहां रहकर उन्होंने गीता, उपनिषद्, संस्कृत, व्याकरण, दर्शन आदि ग्रंथों का गहन अध्ययन किया । तत्पश्चात् पतंजिल विश्वविद्यालय हरिद्वार से योग विषय में स्नातक की परीक्षा सर्वोच्च अंक लेकर उत्तीर्ण की और भूतपूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद जी के करकमलों से स्वर्णपदक प्राप्त कर गौरवान्वित हुए । पुनश्च इसी विषय में देवसंस्कृति विश्वविद्यालय हरिद्वार से स्नात्तकोत्तर परीक्षा में भी प्रथम स्थान हासिल कर लोकसभा के स्पीकर श्री ओम बिडला जी के करकमलों से स्वर्णपदक प्राप्त किया । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी से योग में विद्यावारिधि (पी.एच.डी.) की उपाधि से अलंकृत हुए । केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय के गुरुवायुर परिसर केरल में 2 वर्ष तक अध्यापन कार्य किया । इन्होंने परिश्रम, साधना व प्रतिभा के बल पर दिनांक 6 सितंबर 2025 को सोमनाथ संस्कृत विश्वविद्यालय (गुजरात) के योग विभाग में सहायक प्राध्यापक के पद को अलंकृत किया । अपने जीवन को योग के प्रति समर्पित करने का दृढ़ संकल्प लिया । छ.ग. प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि सभा परिवार तथा समस्त योग प्रेमी बन्धुओं की ओर से हार्दिक बधाई और उज्ज्वल भविष्य की अनेकानेक शुभकामनाएँ ।

पर्व प्रेरणा

-: 17 सितम्बर विश्वकर्मा जयंती पर :-

विश्वकर्मा और वेद

– आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी

वैदिक वाङ्मय में विश्वकर्मा शब्द का व्यापक अर्थ है । यह शब्द गुणवाचक है व्यक्तिवाचक नहीं । अतः इस शब्द से किसी निश्चित विश्वकर्मा का ज्ञान न होकर अनेक विश्वकर्माओं का ज्ञान होता है । तद्यथा– सृष्टि रचयिता परमपिता परमात्मा, शिल्पशास्त्र के आविष्कर्त्ता व सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता ऐतिहासिक महापुरुष विश्वकर्मा तथा सूर्य, वायु, अग्नि, पृथिवी व वाणी आदि जड़ चेतन रुप में अनेक विश्वकर्मा हैं ।

विश्वकर्मा वेद का शब्द है । यह वेद से लेकर ही लोक में प्रयुक्त हुआ । वेद के सभी शब्द यौगिक् हैं अथवा योगरुढ़ि किन्तु कोई भी शब्द वेद में रूढ़ि नहीं है । वेद के प्रत्येक शब्द का अर्थ उन शब्द के अन्दर ही निहित हैं उसे समझने के लिए हमें उस शब्द के अन्दर प्रविष् होना पड़ेगा । शब्द के अन्दर प्रविष्ट होकर उसके धातु, प्रत्यय का विभाग करके स्वाभाविक मूल अर्थ को जानने का नाम ही यौगिक प्रक्रिया है । वेदसम्मत इस यौगिक प्रक्रिया से शब्द का जो अर्थ जाना जाता है वह वास्तविक व अपरिमित होता है । इसके विपरीत वेद के शब्द लोक में प्रयुक्त होने पर जब अपने वास्तविक शब्द से हटकर किसी भी निश्चित किए गए अन्य अर्थ में रूढ़ हो जाते हैं तब उन्हें रूढ़ि शब्द कहते हैं । उदाहरण के लिए एक लोक प्रसिद्ध शब्द पंकज का यौगिक अर्थ करने पर पंक अर्थात् कीचड़ में उत्पन्न होने वाले पौधे कमल आदि सभी को ग्रहण होता है किन्तु यदि यही पंकज नाम किसी व्यक्ति अथवा वस्तुका रख दें तो यह शब्द रूढ़ि ही कहलाएगा और अपने वास्तविक स्वाभाविक अर्थों को छोड़कर किसी निश्चित किए हुए व्यक्ति अथवा वस्तु के लिए संकुचित अर्थ में रूढ़ हो जाएगा । वेद का विश्वकर्मा का वाचक न होकर यौगिक प्रक्रिय़ा से अपने स्वाभाविक अर्थ द्वारा सृष्टि रचयिता परमपिता परमात्मा व उसके द्वारा रचित सूर्य, वायु, अग्नि आदि वैदिक पदार्थों का बोध कराता है ।

वेद ईश्वरीय ज्ञान है । परमेश्वर सृष्टि के आरम्भ में जैसे कोई वादित्र–बाजा बजाए या कठपुतली को चेष्टा कराये ठीक उसी प्रकार अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा नामक चार ऋषियों को साधन बनाकर सब मनुष्यों के हितार्थ अपने ज्ञान ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद का प्रकाश करता है । प्रभु वेदों का यह ज्ञान प्रत्येक सृष्टि के आरम्भर में ठीक इसी प्रकार का देता रहा है व सदैव देता रहेगा । उसमें कभी किञ्चित परिवर्तन नहीं करता । इस नित्य ज्ञान वेद में देश काल आदि से सीमित किसी व्यक्ति, स्थान या इतिहास का वर्णन नहीं है । यदि वेद का ज्ञान सार्वकालिक अनादि व अनन्त है और महापुरुष उत्पत्ति व मरणधर्मी हैं तो नित्यज्ञान वेद में अनित्य महापुरुषों की कथा कैसे सम्भव है ? अतः हमें दशरथनन्दन राम, योगीराज कृष्ण व शिल्पशास्त्र के ज्ञाता विश्वकर्मा आदि महापुरुषों का मानवीय इतिहास इतिहासादिक ग्रन्थों में ही ढूंढा चाहिए वेद में नहीं ।

वेद के विश्वकर्मा शब्द से ज्ञात परमपिता उसके द्वारा रचित सूर्य, वायु, अग्नि आदि विश्वकर्मा व ऐतिहासिक महापुरुष शिल्पशास्त्र के ज्ञाता विश्वकर्मा ये समस्त ही विश्वकर्मा हमारे जिज्ञास्य हैं हम इन्हें जानने का समुचित प्रयत्न करें । निरुक्तकार महर्षि यास्क विश्वकर्मा शब्द यौगिम अर्थ लिखते हैं – **'विश्वानि कर्माणि येन यस्म वा स विश्वकर्मा, विश्वकर्मा सर्वस्य कर्ता'** जगत् के सम्पूर्ण कर्म जिसके द्वारा सम्पन्न होते हैं अथवा सम्पूर्ण जगत् में जिसका कर्म है वह सब जगत् कर्ता विश्वकर्मा है । विश्वकर्मा शब्द के इस यथार्थ अर्थ के आधार पर विविध कला कौशल के आविष्कारक यद्यपि अनेक

विश्वकर्मा सिद्ध हो सकते हैं तथापि सर्वाधार सर्वकर्ता परमपिता परमात्मा ही सर्वप्रथम विश्वकर्मा है। ऐतरेय ब्राह्मण ग्रन्थ के मतानुसार **'प्रजापतिः प्रजाः सृष्ट्वा विश्वकर्माऽभवत्'** प्रजापति परमेश्वर प्रजा को उत्पन्न करने से सर्वप्रथम विश्वकर्मा है। वेद में परमेश्वर के विश्वकर्तुत्व का अद्भुत व मनोरम चित्रण विश्वकर्मा नाम लेकर अनेक स्थानों पर किया गया है। सृष्टि का मुख्य निमित्त कारण परमात्मा ही है। वही सब सृष्टि को प्रकृति से बचाता है जीवात्मा नहीं। इस कारण सर्वप्रथम विश्वकर्मा परमेश्वर है। परमेश्वर ने जगत् को बनाने की सामग्री प्रकृति से सृष्टि की रचना की है एतद्विषयक निम्नलिखित मन्त्र दृष्टव्य है –

किं स्विदासीदाधिष्ठानमारभणं
कतमस्तिवत्कथासीत्। यतो भूर्मि
जनयन्विश्वकर्मा वि द्यामौर्णोन्महिना
विश्वचक्षाः ॥ ऋ. 10/81/2

अर्थात् जगत् को उत्पन्न करने में कौन सा अधिष्ठान था, इसे आरम्भ करने का कौन सा मूल उपादानकारण जगत् को बनाने की सामग्री थी कि जिससे विश्वकर्मा परमेश्वर ने भूमि और द्यौलेक को अत्यन्त कौशल से उत्पन्न किया। सर्वदृष्टा परमेश्वर ही अपने महान् ज्ञानमय सामर्थ्य से प्रकृति को गति देकर विकसित करके सृष्टि की रचना करता है। उसके विश्वकर्मत्व को देखकर बड़े-बड़े विद्वान् आश्चर्य करते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी परमेश्वर की सृष्टि रचना का वर्णन सत्यार्थ प्रकाश में निम्नलिखित शब्दों में करते हैं – देखो ! शरीर में किस प्रकार की ज्ञान पूर्वक सृष्टि रची है कि विद्वान् लोग देखकर आश्चर्य मामते हैं। भीतर हाड़ों को जोड़, नाड़ियों का बन्धन, मांस का लेपन, चमड़ी का ढक्कन, प्लीहा, यकृत. फेफरा, पखा कला का स्थापन, जीव का संयोजन, शिरोरुप मूल रचन लोग नखादि का स्थापन, आँख की अतीव सूक्ष्म शिरा का तारवत् ग्रन्थन, इन्द्रियों के मार्गों का प्रकाशन, जीव के जागृत, स्वप्न, सुषप्ति अवस्था भोगने के लिए स्थान विशेषों का निर्माण, सब धातु का विभागीकरण, कला, कौशल स्थापनादि अद्भूत सृष्टि को बिना परमेश्वर के कौन कर सकता है ? इसके बिना नाना प्रकार के रत्न धातु से जड़ित भूमि, विविध प्रकार के वटवृक्ष आदि के बीजों में अतिसूक्ष्म रचना, असंख्य हरित, श्वेत, पीत कृष्ण चित्र मध्यरुपों से युक्त पत्र, पुष्प, फल, अन्न, कन्द मूलादि रचन अनेकानेक करोड़ों भूगोल, सूर्य, चन्द्रादि लोक निर्माण, धारण, भ्रामण, नियों में रखना। आदि परमेश्वर के बिना कोई नहीं कर सकता। इस प्रकार वेद व सृष्टि की रचना का अद्भूत सामर्थ्य केवल परमेश्वर का है इसलिए सर्वप्रथम विश्वकर्मा वहीं है। परमेश्वर के अनन्त गुण, कर्म, स्वभाव होने से उसके विश्वकर्मा नाम की भांति सच्चिदानन्द स्वरुप, निराकार सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु व सृष्टिकर्ता आदि अनन्त नाम है किन्तु उसका मुख्य नाम ओ3म् है यह ध्यान रखना चाहिए।

विश्वकर्मा परमेश्वर ने जगत् में अनेक पदार्थ रचे हैं। उन पदार्थों में परमेश्वर ने जितने-जितने दिव्यगुण स्थापित किए हैं उतने-उतने ही दिव्यगुण हैं न उससे अधिक और न न्यून। उन दिव्य गुणों के द्वारा विश्व में अपना-अपना कर्म करने से अग्नि, सूर्य आदि जब पदार्थ भी विश्वकर्मा कहलाते हैं। शतपथ ब्राह्मणग्रन्थ में **'विश्वकर्मायमग्निः'** वाक्य से अग्नि को विश्वकर्मा कहा है। गोपथ में **'असौ वै विश्वकर्मा योऽसी सूर्य तपित'** कहकर विश्व को प्रकाशित करने के कर्म से सूर्य को विश्वकर्मा कहा है। वैदिक साहित्य में इसी प्रकार से वायु, पृथिवी व वाणी आदि तीनों लोगों के अनेक दैविक पदार्थों को विश्वकर्मा श्द से व्यक्त किया गया है। हमें इन पदार्थों के दिव्य विश्वकर्त्तव्य को जानकर विद्या, विज्ञान की वृद्धि करनी चाहिए। सृष्टि के आरम्भकाल में मनुष्य के पास नामकरण के कोष के रुप में केवल वेद थे।

भूतं भव्यं भविष्यच्च
सर्वं वेदात् प्रसिद्ध

-: शिक्षक दिवस 5 सितम्बर :-

डॉ. राधाकृष्णन् और शिक्षक दिवस

– मनुदेव अभय विद्यावाचस्पति

प्रतिवर्ष की भांति शिक्षक दिवस पुनः नूतन सन्देश लेकर उपस्थित हो गया है। आज इस महानदेश के राष्ट्रपित डॉ. सर्वपल्लीराधाकृष्णन् का जन्म दिवस भी है। इसी दिन उनका जन्म सन् 1886 ई. में तिरुतणी (तमिलनाडु) नामक गांव में जो कि चैन्नई (मद्रास) से मात्र 50 कि.मी. दूर है, हुआ था। इनके माता–पिता अत्यन्त ही धार्मिक अभिरुचि के थे। फलतः इनके पूर्व जन्म के सुसंस्कार तथा माता–पिता की सतोगुणी मनोवृत्ति का बड़ा सुन्दर प्रभाव इस बालक पर पड़ा। डॉ. राधाकृष्णन् जो कि स्वतन्त्र भारत के द्वितीय राष्ट्रपति थे, आधुनिक भारत के सबसे अधिक यशस्वी शिक्षक माने जाते हैं। इन्होंने अपनी असाधारण प्रतिभा से विश्व के अनेक मूर्धन्य लोगों को अपनी विद्वत्ता से प्रभावित किया था। वे अत्यन्त मेधावी छात्र रहे तथा तिरुपति बैंगलोर तथा मद्रास (चेन्नई) में शिक्षा प्राप्त कर उनसे सम्मान प्राप्त किया था। वे मद्रास में प्रेसीडेन्सी कालेज में सहायक प्राध्यापक बने। सन् 1926 में आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय (इंग्लैंड) में स्फान्डिग प्रोफेसन नियुक्त हुए। वे आंध्र विश्वविद्यालय तथा बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी के कुलपति रहे। सन् 1948 में विश्वविद्यालय तथा आयोग के अध्यक्ष बने। सन् 1952 से 1962 तक भारत के उपराष्ट्रपित उपाधि से अलंकृत किया गया। 5 सितम्बर 1967 में भारतीय डाक तार विभाग ने उनके सम्मान में एक विशेष डाक टिकट जारी किया। यह सदा स्मरणीय तथ्य है कि तभी से इस दिन 5 सितम्बर शिक्षक दिवस मनाने की परिपाटी प्रचलित है।

डॉ. राधाकृष्णन् दर्शन–शास्त्र के प्रकाण्ड पंडित जाने जाते थे। इन्होंने भारतीय सांस्कृतिक निधि का मूल्यांकन करने में विश्व के छोटे–बड़े असंख्य लोगों को मूल्यवान सहायता की। इनकी वाणी भी बड़ी प्रखर थी कि अपने शान्त और मृदुल स्वभाव से सबको प्रभावित कर देते थे। कभी कभी विषम परिस्थिति उत्पन्न होने पर ये मौन धारण कर तटस्थता का परिचय देकर सबको चमत्कृत कर देते थे। ये सन् 1949 से 1956 तक रुस में भारत के राजदूत रहे। कहते हैं तानाशाह स्टालिन तक इनकी विद्वत्ता, सौम्यता व विश्वबंधुता की भावना से द्रवीभूत होकर इनका बड़ा सम्मान करता था। एक बार स्टालिन से भेट होने पर इन्होंने उसके सम्मुख "भौतिकवाद और अध्यात्मवाद" को मनोहारी वक्तव्य दिया था तथा स्पष्ट रुप से कहा था – रोटी, कपड़ा और मकान का उद्घोष अधूस सत्य है। पूरा सत्य तो यह है कि 'रोटी, कपड़ा और मकान शिक्षा, रक्षा, न्याय और भगवान' यह सुनकर स्टालिन अवाक रह गया। वे 1952 में संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठन की महासभा के अध्यक्ष भी रहे। इनकी मृत्यु 16 अप्रैल 1975 को हुई। उनके गुणों की प्रशंसा करते हुए एक विद्वान् ने ठीक ही लिखा है – "डॉ. राधाकृष्णन् गौतम बुद्ध

> "सामान्य दिनों में तो व्यक्ति **स्कूल, कॉलेज, गुरुकुल आदि संस्थाओं** में बहुत कुछ **सीखता** है। परंतु **संकट की घड़ी** में (गंभीर रोग से पीड़ित हो जाने पर) भी व्यक्ति कुछ विशेष **बातें सीखता है। आनन्द के समय** में तो अनेक बार पिछली **शिक्षाएं भी भूल** जाता है। जैसे **विवाह के अवसर** पर व्यक्ति शराब पीकर बहुत सी **सभ्यताएं भूल** जाता है।"

की तरह हृदय में अपार करुणा लेकर आये थे। उनका दीप्तिमय तथा उज्ज्वल आलोक भारत के आकाशा में तो फैला ही विश्व की धरती पर उनकी प्रखर रश्मियों के स्पर्श से धन्य हो गई।" इस प्रकार ऐसी श्रेष्ठ और पवित्र आत्मा की पुण्य स्मृति में उनके जन्म दिवस को शिक्षक दिवस के रुम में माना और आदरणीय और शिक्षा जगत् के लिए प्रेरणादायी बन गया है।

यह कहते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि इस दिन प्रत्येक वर्ष शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने वाले उद्भट विद्वान शिक्षकों का सम्मान समारोह आयोजित किया जाता है। अभी तक असंख्य शिक्षा-विदों, जिनमें शिक्षक और शिक्षिकाएँ आदि सभी सम्मिलित हैं का राष्ट्रीय सम्मान कर अनेक प्रेरणाएं दी जाती रही है। यहां यह ध्यान रखा है कि संख्याबल की अपेक्षा गुणात्मक-बल अधिक महत्वपूर्ण और सफलदायी होता है।

जालसाजी धार्मिकता नहीं, केवल धर्मान्तरण

– **डॉ. ज्ञानप्रकाश,** सेवानिवृत्त प्रोफेसर, कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

आदिवासियों के एक गांव में मैं ठहरा था। बस्तर में आदिवासियों को ईसाई बनाया जाता है, काफी ईसाई बना लिए गए हैं। मुझे कुछ एतराज नहीं है, क्योंकि वे हिन्दू थे तो मूढ़ थे, ईसाई हैं तो मूढ़ हैं। मूढ़ता तो कुछ बदली नहीं है। मूढ़ता तो कुछ मिटती नहीं है। तो मूढ़ इस भीड़ में भेड़ों के साथ रहे कि उस भीड़ में रहे और भेड़ों के साथ पड़ें, क्या फर्क पड़ता है ? मूढ़ता तो वी की वही है। मगर किस तरकीब से उन गरीब आदिवासियों को ईसाई बनाया जा हा है। एक ईसाई पादरी उनको समझा रहा था। उसने एख राम की प्रतिमा बना रखी थी और जीसस की, बिलकुल एक जैसी। और उनको समझा हा था कि देखों, यह बाल्टी भरी रखी है, इसमें मैं दोनों को डालता हूँ। तुम देख लो। जो डूब जाएगा उसके साथ रहे तो तुभ भी डूबोगे। जो तैरेगा वही तुमको तिराएगा और बात बिलकुल साफ थी। सारे आदिवासी उत्सुक होकर बैठ गए कि भाई यह देखने वाली बात है, इससे यह सिद्ध ही हुआ जा रहा है। प्रमाण सामने हैं आंख के। दोनों मूर्तियाँ पादरी ने छोड़ दी पानी में। राम जी तो एकदम डुबकी मार गए। जैसे रास्ता ही दिख रहे थे कि गोला मारें ! गोला मारा और निकले ही नहीं। और जीसस तैरने लगे। जीसस की मूर्ति बनाई थी लकड़ी की और राम की मूर्ति बनाई थी लोहे की। उस पर खूब रंग एक सा कर दिया था दोनों पर पुताई एक सी कर दी थी, ऊपर से एक जैसी लगती थी।

एक शिकारी, जो बस्तर शिकार करने आया था, मेरा परिचित व्यक्ति था। मैं जिस विश्वविद्यालय में प्रोफेसर था, वहीं वे प्रोफेसर थे। और उनका शौक एक ही था-शिकार। उसने यह हरकत देखी। वह समझ गया फौरन कि क्या जालसाजी है। उसने कहा कि ठहरों, इससे कुछ तय नहीं होता। क्योंकि हमारे शास्त्रों में तो अग्निपरीक्षा लिखी है, जलपरीक्षा लिखी ही नहीं। आदिवासियों ने कहा, यह बात सच है। अरे सीता मैया भी जब आई थीं तो कोई जलपरीक्षा हुई थी ? अरे अग्निपरीक्षा हुई थी। पादरी घबराया कि यह बड़ा उपद्रव हो गया। यह दुष्ट कहां से आ गया और भागने की भी कोशिश पादरी ने की, लेकिन आदिवासियों ने कहा, भैया अब ठहरों, अग्निपरीक्षा और हो जाए। यह बेचारा ठीक ही कह रहा है, क्योंकि हमारे शास्त्रों में अग्निपरीक्षा का उल्लेख है। सो आघ जलाई गई। अब पादरी बैठा है उदास कि अब फंस गए। अब भाग भी नहीं सकते। और जीसस और रामचन्द्र जी का अग्नि में उतार दिया। रामचन्द्र जी तो बाहर आ गए अग्नि से, जीसस खाक हो गए। सो आदिवासियों ने कहा, भैया, अच्छा बचा लिया हमें। अगर आज अग्निपरीक्षा न होती तो हम सब ईसाई हुए जा रहे थे। और यह बहुत पुरानी तरकीब है। यह सदियों से इसका उपयोग किया जा रहा है। और फिर भी अजीव आदमी है कि इन्हीं बातों को, इन्हीं जालसाजियों को फिर स्वीकार करने को राजी हो जाता है। कैसे-कैसे।

जयन्ती

महर्षि दयानन्द के 200 स्वर्णिम विचार

संकलन : आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री
अंतर्राष्ट्रीय कथाकार, संपादक-अध्यात्मपथ

सत्यार्थ प्रकाश से

(1) जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है, वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दुःख छूट कर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हो जाते हैं, इसलिए परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिए ।

(2) धर्मयुक्त सत्यभाषाणादि कर्म करना और मिथ्या भाषाणादि अधर्म को छोड़ देना ही मुक्ति का साधन है ।

(3) जब तक इस होम-हवन का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाए ।

(4) कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है । अथवा मत-मतान्तर के आग्रहरहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता-माता के समान, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है ।

(5) कन्या का नाम दुहिता इस कारण से है कि विवाह दूरदेश में होने से हितकारी होता है निकट रहने से नहीं ।

(6) जिसके शरीर में सुरक्षित वीर्य रहता है तब उसको आरोग्य बुद्धिबल, पराक्रम बढ़ के बहुत सुख की प्राप्ति होती है ।

(7) जो पुरुष विद्वान्, ज्ञानी, धार्मिक, सत्पुरुषों का संगी, योगी पुरुषार्थी, जितेन्द्रिय, सुशील होता है वह धर्मार्य, काम, मोक्ष को प्राप्त होकर इश जन्म और परजन्म में सदा आनन्द में रहता है ।

(8) हे गृहस्थों ! जिस कुल में भार्या से प्रसन्न पति और पति से भार्या सदा प्रसन्न रहती है, उसी कुल में निश्चित कल्याण होता है और दोनों परस्पर अप्रसन्न रहें तोउस कुल में नित्य कलह वास करता है ।

(9) परमात्मा की सृष्टि में अभिमानी, अन्यायकारी, अविद्वान् लोगों का राज्य बहुत दिन तक नहीं चलता ।

(10) विवाह करना लड़का-लड़की के आदीन होना उत्तम है । जो माता-पिता विवाह करना कभी विचारें तो भी लड़का लड़की की प्रशन्नता के बिना न होना चाहिए क्योंकि एक दूसरे की प्रशन्नता से विवाह होने में विरोध कम होता है और संतान उत्तम होते हैं ।

(11) झगड़ा झूठे विषयों में होता है ।

(12) संतान लोग अपने माता-पिता की सेवा और मान्य करें, जिससे उनकी उमर बढ़े ।

(13) जैसे मूल कट जाने से वृक्ष नष्ट होता है वैसे पाप को छोड़ने से दुःख नष्ट होता है ।

(14) जैसे पुरुषार्थ करते हुए पुरुष का सहाय दूसरा भी करता है वैसे धर्म से पुरुषार्थी पुरुष का सहाय ईश्वर भी करता है ।

(15) जैसे अग्नि में तपाने से सुवर्ण आदि धातुओं के मल नष्ट होकर शुद्ध होतेहैं वैसे प्राणायाम करने से मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं ।

(16) क्रोधादि दोष और कटुवचन को छोड़ शान्त और मधुर वचन ही बोले और बहुत बकवास न करें। जितना बोलना चाहिए उससे न्यून या अधिक न बोलें ।

(17) जो बलवान होकर निर्बल की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थवश होकर

परहानि मात्र करता है वह जानों पशुओं का भी बड़ा भाई है।

(18) माता, पिता तथाअध्यापक लोग ईर्ष्या, द्वेष से ताड़न न करें किन्तु ऊपर से भय प्रदान और भीतर से कृपा दृष्टि रखें

(19) वस्तुतः जब तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान होता है। वह कुल धन्य ! वह सन्तान बड़ा भाग्यवान ! जिसके माता और पिता धार्मिक विद्वान् हों।

(20) छल, कपट वा कृतघ्नता से अपना ही हृदय दुःखिता होता है तो जो दूसरे की क्या कथा कहनी चाहिए।

(21) मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरें और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं, किन्तु अपने सर्वसामर्थ्य से धर्मात्माओं कि चाहे वे महान अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान और गुणवान भी हो, तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त, चाहे प्राण भी भले ही जावे, परन्तु इश मनुष्यरुप धर्म से पृथक कभी न होवे।

(22) ओ३म् शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है।

(23) आठ वर्ष के हों तभी लड़कों को लड़कों की और लड़कियों को लड़कियों की पाठशाला में भेज देवें।

(24) सन्तानों को उत्तम विद्या शिक्षा, गुण कर्म और स्वभाव रुप आभूषणों का धारण करना माता-पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है।

(25) मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।

(26) चाहे लड़का-लड़की मरणपर्यन्त कुमार रहें परन्तु असदृश अर्थात् परस्पर विशुद्ध गुण-कर्म-स्वभाव वालों का विवाह कभी न होना चाहिए।

(27) जो सदा नम्र, सुशील, विद्वान और वृद्धों की सेवा करता है, उसका आयु, विद्या, कीर्ति और बल ये चार सदा बढ़ते हैं।

(28) जहाँ भोग वहां रोग और जहां रोग वहां वृद्धावस्था अवश्य होती है।

(29) जो-जो शुद्धि का नाश करने वाले पदार्थ हैं उनका सेवन कभी न करें।

(30) विद्या पढ़ने का स्थान एकान्त देश में होना चाहिए औरवे लड़कों और लड़कियों की पाठशाला दो कोष एक-दूसरे से दूर होनी चाहिए।

(31) सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन दिये जायें, चाहे वह राजकुमार वा राजकुमारी हों, चाहे दरिद्र के संतान हो, सबको तपस्वी होना चाहिए।

(32) जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुंचता है उतना किसी से नहीं। जैसे माता सन्तानों पर प्रेम, उनका हित करना चाहती है उतना अन्य कोई नहीं करता। धन्य वह माता है कि जो गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या न हो तब तक सुशीलता का उपदेश करें।

- शेष अगले अंक में

आरोग्य

मधुमेह से कैसे बचें ?

- आचार्य डॉ. वेदव्रत आर्य

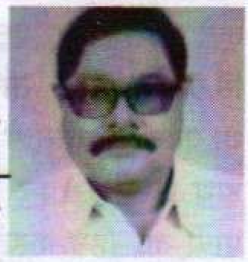

पूर्व में कफज प्रमेह के विषय में यथावश्यक जानकारी दी गई, अब पित्तज प्रमेह के छः भेद हैं जिनका नाम पहले लिखे जा चुके हैं।

उष्ण - अम्ल-लक्षण-क्षारकटुक-अजीर्णभोजनपसेविनस्तथा- अतितीक्ष्ण-आतप-अग्निसन्ताप-श्रम-क्रोध-विषमाहारोपसेविनश्च तथाविधशरीरस्यैव क्षिप्रं पित्तं प्रकोपमापद्यते, तत्तु प्रकुपितं तथैव-आनुपूर्व्या प्रमेहानिमान् षट् क्षिप्रतरमभिनिर्वर्तयति ॥ (चरक नि. 4/24)

उष्ण, अम्ल, लवण, क्षार, कटु, अजीर्ण भोजन के सेवन तथा अतितीक्ष्ण धूप तथा अतितीक्ष्ण धूप, अग्नि का संताप, श्रम, क्रोध, विषम आहार का अत्यधिक सेवन करने वालों में पित्त शीघ्र ही प्रकुपित हो जाता है। वह कुपित पित्त उसी क्रम से दृष्यों को दूषित करके शीघ्र ही छः प्रकार के पित्त प्रमेहों की संप्राप्ति कराता है जिस क्रम से प्रकुपित कफ कफज प्रमेह को उत्पन्न करता है अर्थात् पित्त के गुणों की विशेषता के अनुसार भिन्न-भिन्न लक्षण युक्त पित्तज प्रमेहों की सम्प्राप्ति होती है और तदनुसार ही नामकरण भी होता है।

पित्तज प्रमेहों के लक्षण इस प्रकार है -

(1) क्षारमेह - पित्त प्रकोप के कारण क्षारमेही पुरुष निरन्तर गंध, वर्ण, रस और स्पर्श में जासा क्षार (खारे जल की तरह) होता है वैहा ही मूत्र त्याग करता है।

(2) कालमेह - इसमें मूत्र मसी अर्थात् काली स्याही के रंग की तरह होता है।

(3) नीलमेह - इस प्रमेह में चाष पक्षी (नीलकण्ठ) के पंख के रंग की तरह नीले रंग का अम्लता युक्त मूत्र होता है।

(4) रक्तमेह - इस प्रमेह में विस्र (आम गंधी/मछली की तरह गन्ध), लवणयुक्त उष्ण और रक्त (लाल) वर्ण का मूत्र होता है, यह रक्तमिश्रित भी होता है, इसे ऐलोपैथी के Harmaturia से तुलना की जा सकती है।

(5) मन्जिष्ठामेह - इसमें मूत्र की गन्ध रक्तमेह की तरह विस्र, वर्ण (रंग) मजीठ के काढ़े की तरह एवं मूत्र की मात्रा अत्यधिक होती है।

(6) हरिद्रामेह - पित्त के प्रकोप के कारण हल्दी की तरह पीला, कटु रसयुक्त मूत्र का त्याग अत्यधिक मात्रा में होती है।

इन छहों प्रकार के पित्तज प्रमेहों के लिए कहा गया है - "सर्व एव ते याप्याः संसृष्ट-दोष-मेदः स्थानत्वात् विरुद्धोपक्रम-त्वाच्चेति।" (चरक नि. 4/27) अर्थात् पित्तदोष मेद के स्थान पर जाकर उसे दूषित कर पित्तज प्रमेह को उत्पन्न करता है। पित्त का स्थान आमाशय है तथा मेद का स्थान वपावहन है, पित्त भी आमाशय के एक देश में ही रहता है। दोष और दृष्य के स्थान की समीपता होने के कारण नित्य दृष्टि होते रहने से उनकी चिकित्सा दुष्कर होती है अर्थात् संसृष्ट दोष मेद के रुप में होने के कारण तथा हेतुविरुद्ध होने से चिकित्सा में विरुद्धता आती है। यदि पित्त दोष के लिए मधुर शील द्रव्य पथ्य है तो यही द्रव्य मेद के लिए अपथ्य हो जाते हैं, यथा कटु आदि रस मेद के लिए हितकर होते हैं, वही पित्तदोष के लिए अहितकर होते हैं। (चक्रपाणि)

इसलिए पित्तज प्रमेह को याप्य (चिकित्सा लेते हुए नियन्त्रण में रखा जा सकता) कहा गया है। यहां पर पित्तज प्रमेह के छहों प्रकार के लिए कुछ सरल प्रयोग दिये जा रहे हैं, जिससे इन्हें नियन्त्रण में रखा जा सके :

1. क्षारमेह - त्रिफले का हिम लाभाकारी है। (दरदरे

कूटे हुए त्रिफला 26 ग्राम को 10 गुने अर्थात् 250 मि.ग्राम./मि.ली. ताजा ठण्डे पानी में डालकर मिट्टी या कांच के बर्तन में रात भर ढंक कर रहने दें, प्रातः हाथ से मसल कर कपड़े से छान लें, इस छने हुए पानी को हिम कहते हैं, इसकी सामान्य मात्रा 50 मि.ग्रा./मि.ली. हैं, इसे दिन में तीन बार पीना चाहिए)

(2) कालमेह – नीम की अंतर्छाल, आंवला, गिलोय और परवल के पत्तों का काढ़ा बनाकर पीना चाहिए।

(3) नीलमेह – पीपल के पेड़ की छाल का काढ़ा या हिम लाभकर होता है।

(4) रक्तमेह – लाल कमल के फूल, नीले कमल के फूल फूल प्रियङ्गु और पलास के फूल का काढ़ा बनाकर मिश्री मिला कर पीना चाहिए।

(5) मंजिष्ठामेह – नीम की छाल, अर्जुन वृक्ष की छाल और कमलगट्टे की गिरी के अंदर की हरी बत्ती को निकाल कर काढ़ा बना कर पीना चाहिए।

(6) हारिद्रमेह – लोध, सुगन्धवाला, सफेद चन्दन और धाय के फूलों का काढ़ा या हिम पीना चाहिए।

प्रमेह रोग में अपथ्य :-

कफज प्रमेह – शारीरिक परिश्रम करने में आलश्य करना, अधिकतम समय तक लेटे रहना, दही, जल में रहने वाले प्राणियों का मांसभक्षण, दूध, नवीन अन्न, नवीन मद्य, गुड़ से बने पदार्थ अर्थात् चीनी, शक्कर, खाण्ड आदि मीठे पदार्थ, इसी प्रकार कफ बढ़ाने वाले आँय अन्य सभी पदार्थ।

पित्तज प्रमेह – अम्ल, लवण, कटु, तीक्ष्ण पदार्थ, दही, खट्टी छाछ, तेल और तेल से तले-भुने-छने पदार्थ, गुड़ मिर्च, हींग, कटहल, मूंगफली, कुलथी, राई, सहजन, बैंगन, करेला, बासी भोजन, चाय, शराब या अन्य नशे वाला पदार्थ, थूप में अधिक समय तक रहना या घूमना, बहुत अधिक शारीरिक परिश्रम, राती जागरण, अत्यधिक स्त्री सहवास, क्रोध करना, मानसिक तनाव, लंबे समय तक भूखा रहना आदि।

वातज प्रमेह – वातज प्रमेह (मधुमेह) की चिकित्सा में कई प्रकार की विसंगतियाँ होती हैं, इसलिए पथ्य-अपथ्य का सेवन में भी विभिन्नता होती है, अतः इसके लिए अपने चिकित्सक से सलाह अवश्य लेनी चाहिए।

इन प्रमेहों की उपेक्षा करने पर मधुमेह की सम्प्राप्ति होती है, मधुमेह की गणना वातज प्रमेह के अंतर्गत की गई है, वातज प्रमेह चार प्रकार के होते हैः- वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह औ़र हस्तिमेह। वातज प्रमेह (मधुमेह) को आयुर्वेद में असाध्य अर्थात् उपचार करने पर भी ठीक न होने माना गया है क्योंकि वात (शरीरस्थ वायु) शरीर धातुओं (वसा, मज्जा आदि) को दूषित करके बलपूर्वक खींचकर शरीरस्थ जल (मूत्र) के माध्यम से शरीर से बाहर निकाल देता है, जिससे धातु क्षय होने से ओज का भी क्षय हो जाता है साथ ही इसकी चिकित्सा भी पित्तज प्रमेह से भी अधिक विषय होती है, वात की चिकित्सा स्निग्ध से मेद की वृद्धि होती है, इसी प्रकार मेद की चिकित्सा रुक्ष होती है और रक्षता से वात की वृद्धि होती है, इसलिए मधुमेह की चिकित्सा में शरीरस्थ वात को सम अवस्था में लाते हुए प्रदूषित हुए धातुों का शुद्धिकरण और संरक्षण आवश्यक होता है, समस्या पित्तज प्रमेह की तरह वात को जो द्रव्य सम अवस्था में लाने के लिए उपयुक्त होता है वही द्रव्य धातुओं का क्षरण भी करता है फिर भी आयुर्वेद के आचार्यों ने इस समस्या का प्रयत्नपूर्वक समाधान खोजते हुए एक सीमा तक उन्हें सफलता भी मिली परन्तु अभी तक आयुर्वेदाचार्यों को ही नहीं आधुनिक चिकित्सकों को भी पूर्णतः नही मिली है इसलिए मधुमेह को असाध्य रोग की श्रेणी में माना गया है।

इस प्रकार मधुमेह होने से पूर्व इन प्रमेह के लक्षणों को देख समझकर चिकित्सा की सलाह लेकर सावधानी पूर्वक पथ्य और उपचार लेने तथा संयमपूर्वक आसन और प्राणायाम विशेषकर कपालभाति, मूलबन्ध और उड्डियान बन्ध का अभ्यास करना चाहिए।

पता : वेदमंदिर सोंठी (सक्ती),
जिला-सक्ती (छ.ग.) मोबा. नं. 7566353498

समाचार प्रवाह

महर्षि दयानन्द आर्य उ.मा. विद्यालय टाटीबन्ध में 78 वां स्वतन्त्रता दिवस सोल्लास सम्पन्न

रायपुर । 15 अगस्त 2024 को छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द उ.मा. विद्यालय टाटीबन्ध रायपुर के विशाल प्रांगण में 78वाँ स्वन्तत्रता दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। ध्वजारोहण का कार्यक्रम छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान श्री रामनिवास गुप्ता, श्री जगबन्धु आर्य व सम्माननीय पदाधिकारियों के मुख्य आतिथ्य में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आर्यसमाज टाटीबन्ध रायपुर के समस्त पदाधिकारीगण एवं अन्य मान्य अतिथिगण मुख्य रुप से उपस्थित थे। मुख्य अतिथि ने समस्त छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक बधाई देते हुए सारगर्भित उद्‌बोधन दिया। समारोह में विद्यालय के छात्र-छात्राओं द्वारा परेड का प्रदर्शन एवं रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। कार्यक्रम में विद्यालय के प्राचार्य विनोद सिंह, उपप्राचार्य श्री पुरुषोत्तम वर्मा सहित शिक्षक-शिक्षिकाएं व पालकगण भारी संख्या उपस्थित रहे।

तुलाराम आर्य उ.मा. विद्यालय लवन में स्वतन्त्रता दिवस सम्पन्न

लवन । छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित तुलाराम आर्य उ.मा. विद्यालय लवन (बलौदाबाजार) छ.ग. के प्रांगण में 78वाँ स्वन्तत्रता दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। ध्वजारोहण का कार्यक्रम मुख्य अतिथि श्री पारस ताम्रकार के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। साथ सभा बाड़ा लवन के प्रबंधक श्री रामकुमार वर्मा मुख्य रुप से उपस्थित थे। मुख्य अतिथि ने समस्त छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक बधाई देते हुए सारगर्भित उद्‌बोधन दिया। समारोह में विद्यालय के छात्र-छात्राओं द्वारा रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। कार्यक्रम में विद्यालय के प्राचार्या श्रीमती मंदाकिनी ताम्रकार, देवीलाल बर्वे, मनोज कुमार पाण्डे, दुर्गेश बाजपेयी सहित शिक्षक-शिक्षिकाएं व विद्यार्थियों के पालकगण एवं ग्रामीणजन भारी संख्या उपस्थित रहे।

तुलाराम हाई स्कूल कूंरा में स्वतन्त्रता दिवस सोल्लास सम्पन्न

कूंरा। 15 अगस्त 2025 को छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित तुलाराम आर्य हाई स्कूल कूंरा के विशाल प्रांगण में 78वाँ स्वन्तत्रता दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। ध्वजारोहण का कार्यक्रम मुख्य अतिथि के करकमलों द्वारा सम्पन्न किया गया। इस अवसर पर सभा बाड़ा कूंरा के प्रबंधक श्री सुधीर दुबे मुख्य रुप से उपस्थित थे। मुख्य अतिथि ने समस्त छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक बधाई देते हुए सारगर्भित उद्‌बोधन दिया। समारोह में विद्यालय के छात्र-छात्राओं द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम, भाषण, कविता का वाचन किया गया। कार्यक्रम में विद्यालय के प्राचार्य, सहित शिक्षक-शिक्षिकाएं व पालकगण भारी संख्या ग्रामीणजन उपस्थित रहे।

सभा कार्यालय दुर्ग में स्वतन्त्रता दिवस के अवसर आर्यवीर दल प्रदर्शन

दुर्ग । 15 अगस्त 2025 को छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग में 78वाँ स्वन्तत्रता दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। ध्वजारोहण का कार्यक्रम के मुख्य अतिथि भजनोपदेशक पं. सुकान्त आर्य एवं सभा के उपमंत्री श्री जगन्बधु आर्य के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने समस्त छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक बधाई देते हुए

सारगर्भित उद्बोधन दिया। कार्यक्रम में सभा के कर्मचारीगण व आर्य समाज आर्यनगर दुर्ग के समस्त पदाधिकारी व सदस्यगण उपस्थित रहे।

छत्तीसगढ़ के समस्त संबद्ध आर्यसमाजों में श्रावणी पर्व सोल्लास सम्पन्न

दुर्ग। छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा से संबद्ध विभिन्न आर्यसमाजों में दिनांक 9 से 16 अगस्त 2025 तक श्रावणी पर्व के अवसर पर रक्षाबंधन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के दिन वैदिक हवन व सत्संग का कार्यक्रम हुआ। जिसमें आर्यसमाज टाटीबन्ध रायपुर, आर्यसमाज बैजनाथपारा रायपुर, आर्यसमाज रायगढ़, आर्यसमाज सलखिया, महिला आर्यसमाज जवाहर नगर रायपुर, आर्यसमाज आर्यनगर दुर्ग, आर्यसमाज मुड़ागांव, आर्यसमाज पुसौर, आर्यसमाज कोहका भिलाई, आर्यसमाज सुपेला, आर्यसमाज संतोषीनगर रायपुर, आर्यसमाज कवर्धा सहित कई आर्यसमाज व पारिवारिक गृह स्थान सहित अन्य स्थानों पर हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस महाभियान में सभा के पदाधिकारियों सहित समस्त आर्यसमाजों के प्रधान, मंत्री व अन्य गणमान्य आर्यजन, ग्रामीण क्षेत्रों के ग्रामीणजन भारी संख्या में उपस्थित होकर कार्यक्रम को सफल बनाया।

महर्षि दयानन्द आर्य उ.मा. विद्यालय टाटीबन्ध में शिक्षक दिवस सम्पन्न

रायपुर। छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्य उ.मा. विद्यालय टाटीबन्ध रायपुर में 5 सितम्बर 2025 को शिक्षक दिवस का कार्यक्रम श्रीमती अर्चना खण्डेलवाल सभा उपमंत्री के मुख्य आतिथ्य में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर सभा मंत्री जी का सारगर्भित उद्बोधन हुआ, जिसमें उन्होंने समस्त शिक्षकों का सम्मान करते हुए कहा कि शिक्षक विद्यालयीन छात्राओं को अपने ज्ञान व अनुभव का अच्छे ढंग से बच्चों के समक्ष प्रसारित करें। इस अवसर पर सभा मंत्री-श्री अवनीभूषण पुरंग, कोषाध्यक्ष-श्री योगीराम साहू, कार्यालय मंत्री-श्री रवि आर्य, श्री जगबन्धु आर्य, विक्रम आर्य, आर्यसमाज टाटीबन्ध के समस्त पदाधिकारीगण सहित विद्यालय के प्राचार्य श्री विनोद सिंह एवं समस्त शिक्षक-शिक्षिकायें व छात्र-छात्राएं उपस्थित होकर कार्यक्रम को सफल बनाया।

"अग्निदूत" के ग्राहक सदस्यों की सेवा में

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मासिक मुख पत्र 'अग्निदूत' के समस्त ग्राहक सदस्यों से निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क 100/- यथाशीघ्र सभा कार्यालय में भेज दें, जिससे कि उन्हें नियमित रुप से 'अग्निदूत' भेजा जाता रहे। जिन सदस्यों के शुल्क तीन वर्षों से अधिक बकाया हो, उनसे निवेदन है कि वे अपना दसवर्षीय शुल्क 1000/- रु. भेजें। इस कार्य को यथीशीघ्र प्राथमिकता से करें। अन्यथा इस मास से 'अग्निदूत' भेजना बंद कर दिया जायेगा। पत्र व्यवहार में अपना सदस्य संख्या तथा पूरा पता पिन कोड सहित अवश्य लिखें। छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का भारतीय स्टेट बैंक दुर्ग शाखा में सेविंग एकाउन्ट नं. 32914130515 आई.एफ.एस.सी. कोड **SBIN0009075** कोड नं. है। जिसमें आप बैंक की शाखा से आनलाईन शुल्क जमा कर सभा कार्यालय के दूरभाष नं. 0788-4225499 द्वारा सूचित करते हुए अलग से पत्र लिखकर अवगत करा सकते हैं। 'अग्निदूत' मासिक पत्रिका के सम्बन्ध में कोई भी शिकायत हो तो कृपया आचार्य जगबन्धु आर्य (कोषाध्यक्ष) से चलभाष नं. 9770331191 में सम्पर्क कर सकते हैं।

CHHATTISGARH PRANTIYA ARYA PRATINIDHI SABHA
Pay Directly to: 9893063960@indianbk

कार्यालय पता :- 'अग्निदूत', दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.) 491001 फोन : 0788-4225499

छत्तीसगढ़ के विभिन्न क्षेत्रों में सम्पन्न श्रावणी पर्व पर वेद प्रचार कार्यक्रम

CHH-HIN/2006/17407 सितम्बर–2025 डाक पंजी.छ.ग./दुर्ग संभाग/99/2021-23

प्रेषक :
"अग्निदूत" हिन्दी मासिक पत्रिका,
कार्यालय–छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.) 491001

088
...देश (साप्ताहिक)
...ल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा – 15
हनुमान रोड, नई दिल्ली 110001

अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लायसेंस नं. TECH/1-170/CORR/CH-4/2019-20-21

टाटीबन्ध रायपुर में सम्पन्न स्वतन्त्रता दिवस समारोह एवं शिक्षक दिवस की झलकियाँ